सबला

वर्ष 5 : अंक 3 | सेवाग्राम विकास संस्थान, नई दिल्ली | अगस्त-सितंबर, 1992

JAI.S

इस अंक में

हमारी बात	1
न्याय की तलाश में —सुहास कुमार	3
न्याय पाने की रणनीति —वीणा शिवपुरी	5
विवाह और कानून	7
गीत —'युवा साथिन' से साभार	9
जमीन-जायदाद में औरतों के हक —मंजु दत्ता	10
गुज़ारा-भत्ता कानून	12
शीलभंग और बलात्कार कानून —सुहास कुमार	15
कुछ ऐतिहासिक मामले —साभार 'इश्यूस एट स्टेक'	18
चुप्पी की चादर में ढके अपराध	21
क्या मां-बाप बेकसूर हैं —वीणा शिवपुरी	23
मां-बाप का हक: बच्चों का फर्ज	25
सुनो बहना (कविता) —शोभा कुमारी	26
महिलाएं और कानूनी मदद —सुहास कुमार	27
कानून के दरवाजे पर दस्तक —डा. प्रेमलता	31
नारी-नारी की दुश्मन—सच या झूठ —श्रीलता बाटलीवाल	33
मेरा पथ (कविता) —चित्रा जोशी	34
पुरुष पाठकों से संवाद —कमला भसीन	35

सहयोग मंडल

कमला भसीन

सुहास कुमार

वीणा शिवपुरी

ज्ञानेंद्र प्रसाद जैन

'जागोरी' समूह

प्रतिभा गुप्ता

बिंदिया थापर—चित्रांकन

नारायण बड़ोदिया—चित्रांकन

ग्रामीण बहनों की द्विमासिक पत्रिका—शिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार तथा 'नोराड', नई दिल्ली द्वारा अनुदानप्रदत; डाक्टर शारदा जैन (सेवाग्राम विकास संस्थान, 1 दरियागंज, नई दिल्ली-110 002) द्वारा संपादित व प्रकाशित तथा इन्द्रप्रस्थ प्रैस (सी. बी. टी.), नेहरू हाउस, 4 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110 002 में मुद्रित।

हमारी बात

औरतें परिवार, समाज और देश का अहम् हिस्सा हैं। औरतों की समस्याएं भी इन सबसे जुड़ी हैं। उन्हें इन सबसे काट कर शून्य में न तो समझा-परखा जा सकता है और न ही हल खोजे जा सकते हैं। चाहे घरेलू मारपीट की समस्या हो या संपत्ति पर अधिकार की, उसका संबंध परिवार में औरत के दर्जे, उसकी आर्थिक स्वतन्त्रता, कानून, सामाजिक रीति रिवाज सभी से होता है। इसलिए परिवार, समाज और देश को भी बदलते समय की मांग के अनुसार बदलना होगा। कानून, सामाजिक रीति रिवाज और नज़रियों में भी बदलाव लाना होगा तभी वह संतुलित बदलाव होगा जो समाज को विकास की तरफ ले जाएगा।

आज जब हम कानून की बात करते हैं, उनमें औरतों के अधिकारों की बात करते हैं तो साथ ही कानून के रखवालों के स्त्री विरोधी पूर्वाग्रहों की बात भी करनी होगी। जब तक पूरी कानूनी प्रक्रिया को औरतों की समस्याओं के प्रति संवेदनशील नहीं बनाया जाएगा वह कानून औरत को न्याय नहीं दिला सकता। यह समझ, यह संवेदनशीलता हर क्षेत्र, हर स्तर पर चाहिए। स्कूल में पढ़ने वाले छोटे-छोटे बच्चों की किताबों में औरत और मर्द की अलग-अलग छवियों से लेकर बड़ी ऊंची सरकारी नौकरियों में लगी औरतों के साथ होने वाले भेदभाव को बदलना होगा। कभी-कभी यह जी चाहता है कि काश एक ऐसी जादू की छड़ी होती जिसे घुमाते ही सबके दिमाग से औरत और मर्द के निश्चित काम, व्यवहार और भूमिकाओं की तस्वीर निकल जाती। उसकी जगह बराबरी, समानता लिए हुए दो इंसान रह जाते। जैसे संसार में अलग-अलग नस्लें, रंग, जातियां और भाषाएं हैं वैसे ही दो अलग-अलग लिंग भी हैं। इन सबके आधार पर भेदभाव क्यों?

लोग अपनी-अपनी इच्छा और योग्यता के आधार पर अपना काम, व्यवहार और भूमिका चुनें। जिसकी इच्छा हो घर संभाले, जिसकी इच्छा हो नौकरी करे या दोनों करें। स्त्री और पुरुष दोनों पर पड़ने वाला सामाजिक दबाव दूर हो ताकि दोनों चैन की सांस ले सकें। वे जैसे हैं वैसे जी सकें न कि समाज के दबाव में मुखौटे पहन कर किसी और का जीवन जिएं। चूंकि जादू की छड़ी तो है नहीं, इसलिए निरंतर कोशिश का लंबा और मुश्किल रास्ता ही हमारे सामने है। हिम्मत हारने से काम न चलेगा। एक दूसरे का हाथ थाम कर ताक़त दें और ताक़त पाएं।

—संपादिका

जानकारी • संघर्ष • संगठन
भारत का संविधान
भारतीय दंड संहिता
बहनों, आपको 'अधिकारों और कानूनी सहायता' का पूरा लाभ आपकी 'संगठन शक्ति' से आसानी से मिल सकता है।...आप सब सुन्दर समाज बनाने में पहल करें • बड़ी-बूढ़ीयां, बेटी और बहु को बराबर का दर्जा दें • नातिनों- पोतियों को प्यार-सम्मान दें • किसी भी निर्दोष और असहाय लड़की या औरत की मदद के लिए आगे आऐं और हमेशा उसकी हिम्मत बढ़ाऐं • ध्यान रखें कि गांव की कोई महिला या औरत अनपढ़ न रह जाय • सच तो यह है कि समाज को सुधारने में जो काम आप सब का 'संगठन' कर सकता है, वह कोई और नहीं।
NARAIN BARODIA

न्याय की तलाश में

महिलाओं पर बढ़ती हिंसा या यों कहें कि हिंसा के अधिकाधिक मामले सामने आने से महिलाओं और महिला संगठनों के लिए एक बड़ी चिंता का विषय बन गया है। समय-समय पर गोष्ठियां और कार्यशालाएं होती रही हैं। उनमें से कुछ खास बिंदु उभर कर आए हैं जिन्हें हम नीचे दे रहे हैं। इन्हें हम कानून लागू करने की प्रक्रिया की दिशा में सुझाव भी कह सकते हैं।

संवेदनशीलता ज़रूरी

कानूनी तंत्र से जुड़े सभी लोगों जैसे पुलिस अफ़सर, सरकारी वकील, जज आदि की संवेदना बढ़ानी ज़रूरी है। उन्हें महिलाओं के दृष्टिकोण के प्रति जागरूक बनाना है। सबसे पहले वास्ता पुलिस से पड़ता है। सबसे ज़्यादा कठिनाई महिलाओं को उनके असंवेदनशील नज़रिए की वजह से आती है। पुलिस और अफ़सरी ट्रेनिंग में इसे शामिल करना चाहिए।

पुलिस की ट्रेनिंग में और भी बहुत सी कमियां हैं। उन्हें पूरी तरह कानूनी जानकारी नहीं दी जाती है ख़ासकर दीवानी कानून की। उनकी जवाबदेही भी होनी चाहिए। अगर पुलिस कर्मचारी अपराधी को बचाए तो उसे कड़ी सज़ा मिलनी चाहिए। अगर थाने में प्रथम सूचना रपट लिखने से इंकार करे तो उसके लिए भी उनके खिलाफ़ कार्यवाही का प्रावधान होना चाहिए।

पुलिस में भ्रष्टाचार के मामले को गंभीरता से लेना चाहिए। जांच के लिए एक समय तय होना चाहिए। सही धारा में चालान प्रस्तुत होना चाहिए। जांच में कमी छोड़ने पर पुलिस पर कार्यवाही होनी चाहिए।

सरकारी वकील का चुनाव उनकी ईमानदारी और संवेदनशीलता को ध्यान में रखकर करना चाहिए। इस स्तर पर भी महिलाओं को अदालत में बहुत दिक्कतें आती हैं। कई मामलों में जैसे दहेज उत्पीड़न, दहेज मृत्यु, यौन हिंसा, बलात्कार आदि मामलों में चश्मदीद गवाह के बजाए परिस्थितिजन्य गवाही पर ज़्यादा ज़ोर देना चाहिए।

ठोस कार्यवाही

कुछ मामलों जैसे दहेज मृत्यु, बलात्कार

आदि में अपराधियों की जमानत नहीं होनी चाहिए। कई ऐसे मामले सामने आए हैं जिसमें सर्वोच्च न्यायलय के फैसले में उनको कड़ी सज़ा सुना दी गई है पर वे आजादी से बाहर घूम रहे हैं। ऐसे मामलों में न्यायालय और न्याय-तंत्र की जिम्मेदारी बनती है कि अपराधी को सचमुच सज़ा मिले, सिर्फ कागज़ पर नहीं।

पड़ोसियों, मित्रों को अपनी बात हिम्मत के साथ कहने का साहस हो इसके लिए पुलिस द्वारा सुरक्षा मिलनी चाहिए। गांव के पास और थाने खुलने चाहिए। कुछ चलते-फिरते थाने भी खोले जा सकते हैं। वहां महिला पुलिस की मौजूदगी ज़रूरी है।

महिलाओं के प्रति किए गए अपराधों के मामलों के लिए अलग न्यायालय बनाए जाएं। महिला संगठनों को क़ानूनी मान्यता दी जाए। उत्पीड़ित व सताई गई औरतों के लिए सुरक्षा-घर खोले जाएं। जो हैं उनको भी चलाने के लिए महिला संगठनों की मदद ली जाए।

हर विवाह का पंजीकरण ज़रूरी किया जाए और उसकी फ़ीस 100 रु. रखी जाए। न्यायालय में ही एक कोष की स्थापना की जाए। इससे जिन महिलाओं का केस कोर्ट में चल रहा है उनकी मदद की जाए।

अलग कानून नहीं चाहिए

हर धर्म के मानने वालों के अन्य व्यक्तिगत कानून के बजाए एक आम कानून होना चाहिए। अलग-अलग कानून होने के कारण महिलाओं को बहुत दबाया जाता है और उन्हें न्याय नहीं मिलता। सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के बावजूद शाहबानों को गुज़ारा-भत्ता नहीं मिल सका क्योंकि धर्म के रखवालों की बात न्यायालय को माननी पड़ी।

एक वकील के सुझाव

- यदि कोई लड़की दहेज या अन्य कारण से ससुराल में सताए जाने के बारे में लिखती है तो चिट्ठी संभालकर रखिए। लिखित सबूत एक मज़बूत सबूत है।
- लड़की को विवाह के समय जो सामान दे रहे हों उसकी तस्वीर खींच कर रखिए। सामान की खरीदारी की रसीदें संभालकर रखिए।
- जब स्थिति गर्म होती है काफ़ी गवाह सामने आते हैं। गवाह उन्हीं को रखें जो आखिर तक साथ निभा सकें।
- जब मामला थाने में दर्ज किया जाता है तो पहला बयान बहुत अहम् माना जाता है। उसको देने के पहले आपस में बातचीत कर लें। हो सके तो वकील की सलाह भी लें। बार-बार बयान बदलने से केस कमज़ोर पड़ता है।
- मामला तलाक़ का हो, गुजारे-भत्ते का हो, दहेज़ का हो या फिर शीलभंग एवं बलात्कार का या अन्य किसी प्रकार के उत्पीड़न का, लिखित सबूत सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण है। उसके खिलाफ़ अपराधी कुछ बोल ही नहीं सकता। उसके बिना केस में दम नहीं होता।

संकलन
सुहास कुमार

न्याय पाने की रणनीति

वीणा शिवपुरी

आजादी के साथ हमारे देश का एक संविधान बनाया गया। इसके तहत स्त्री और पुरुष को समान अधिकार भी मिले। पिछले चार दशकों में समय-समय पर क़ानूनों में कुछ संशोधन भी किए गए ताकि कानून न्याय दिला सकें। ख़ासतौर से औरतों से जुड़े कानूनों में कई बदलाव लाए गए। जैसे बलात्कार कानून, दहेज कानून, सती संबंधी कानून। यह सब होने के बाद भी क्या हम कह सकते हैं कि हर औरत आसानी से अदालत जा सकती है। उसे वहां से न्याय मिल जाता है।

शायद नहीं।

कानून को और सख्त बनाने, सजाएं बढ़ाने के बावजूद बलात्कारी छूट जाते हैं। औरतें जलाई जाती हैं। आमतौर पर औरतें अदालत-कचहरी जाना ही नहीं चाहतीं। आम लोगों से पूछिए तो यही सुनने को मिलेगा कि कानूनी लड़ाई अपने बस की नहीं। वहां न्याय मिलने की आशा बहुत कम है। यानि सरकार की कोशिशों और दावों के बावजूद आज हमारा कानून हमें इंसाफ दिलवाने में पूरी तरह समर्थ नहीं है।

कानून की कमज़ोरियां

कुछ ऐसी कमज़ोरियां जिनका असर मर्द-औरत पर बराबर पड़ता है, उनसे सभी वाकिफ़ हैं।

1. कानूनी प्रक्रिया बहुत लंबी है जिसमें सालों लग जाते हैं। मामलों का फ़ैसला होते-होते एक पूरी उम्र गुज़र जाती है।
2. हमारा कानून आम आदमी की समझ से बाहर

है। उसकी मदद लेने के लिए विशेषज्ञ चाहिए यानि वकील। जिसका अर्थ है आप दूसरे पर निर्भर हो जाते हैं। पैसा भी बहुत खर्च होता है।
3. सारे देश की तरह पूरी कानूनी प्रक्रिया में भ्रष्टाचार है। नीचे से लेकर ऊपर तक हमारी व्यवस्था में बेईमानी का घुन लग गया है। आम आदमी जिसके पास रुपए की ताक़त नहीं है, बहुत बार सच्चा होकर भी वह न्याय नहीं पाता।

औरत न्याय क्यों नहीं पाती?

इन सब कमज़ोरियों के अलावा औरत के रास्ते की अड़चन है उसके प्रति समाज का रवैया। कानून अपने आपमें सिर्फ़ किताब में लिखी हुई बातें हैं। उन्हें लागू करने वाले लोग हैं—पुलिस, वकील, न्यायाधीश। इन सबकी अपनी सामाजिक सोच के कारण कानून कारगर नहीं हो पाता।

बंबई के नारी केंद्र की विभूति पटेल जब एक

औरत के पति द्वारा मारपीट का मामला लेकर थाने में रपट लिखवाने गई तो थानेदार ने कहा —

"अरे, आप किसकी रपट लिखवाने आईं हैं। ये औरत तो पराए मर्दों से हंस-हंस कर बात करती है। इसके मर्द ने तो सिर्फ़ मारा है। मैं होता तो जान ले लेता।"

यह सोच सिर्फ़ एक व्यक्ति की नहीं है। इसी तरह की सोच हर स्तर पर मिलती है। तो भला औरत को न्याय कैसे मिल सकता है?

कुछ समय पहले बंबई में फ्लेविया और मधुश्री नाम की दो औरतें रात को देर से घर लौट रही थीं। फ्लेविया वकील भी है और नारी मुक्ति आंदोलन से जुड़ी हुई है। मधुश्री रंगमंच पर काम करती है। दोनों औरतें पढ़ी-लिखी, जागरूक औरतें हैं। रास्ते में रिक्शा रोक कर उनमें से एक रेलवे स्टेशन की दुकान से सिगरेट खरीदने गई जहां पुलिस वालों ने उसके साथ बदतमीजी की। एतराज करने पर खूब पीटा।

पहले तो यह शिकायत दर्ज करवाने में बहुत कठिनाई हुई। फिर मुकदमा अदालत में आ जाने पर उनके चरित्र पर धब्बा लगाया गया। सरकारी वकील का कहना था कि जो औरतें रात देर गए अकेली घर लौटती हैं या दुकान से सिगरेट खरीदती हैं वे भली औरतें नहीं हैं। इसलिए उनके साथ छेड़छाड़ होने में क्या आश्चर्य।

औरत इंसान नहीं समझी जाती। पूरे समाज में औरत की एक निश्चित छवि है। हर औरत को उसी के अनुसार बोलना-चालना, कपड़े पहनना, व्यवहार करना चाहिए वरना वह भली नहीं कहलाएगी। सवाल यह उठता है कि मान लीजिए वह समाज की नज़र में भली नहीं है लेकिन क्या इंसान भी नहीं है? कानून इंसानों के हक़ों की रक्षा के लिए है, सिर्फ़ भली औरतों के लिए तो नहीं।

जिस समाज में लोग औरत को एक स्वतंत्र दिमाग और इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति के रूप में नहीं देखते बल्कि सिर्फ़ किसी की बहू-बेटी के रूप में देखते हैं वहां औरत के इंसानी हक़ मारे जाते हैं। वे सिर्फ कानून की किताबों में बंद रह जाते हैं।

आखिर क्या करें?

आज औरतों के लिए काम करने वाले सभी कार्यकर्ताओं के सामने यही सवाल उठता है। यदि कानून के ठेकेदारों की आंखों पर पितृसत्ता का चश्मा चढ़ा है तो हमें न्याय कैसे मिलेगा? **आज ज़्यादातर महिला समूहों की मांग कानून में बदलाव लाने की नहीं है, बल्कि कानूनी प्रक्रिया को औरतों के लिए संवेदनशील बनाने की है।** गांव के थानेदार से लेकर बड़े से बड़े न्यायाधीश तक में औरतों की तकलीफों की समझ पैदा की जाए। कुछ समय पहले हमारे देश के एक सर्वोच्च न्यायाधीश ने एक भाषण में कहा था "औरतों की जगह तो सिर्फ़ घर में है।" सोचिए अगर कोई औरत नौकरी करने या तरक्की पाने के अपने हक़ की लड़ाई लड़ती है तो क्या ऐसे विचार वाले न्यायाधीश उसे न्याय दे पाएंगे?

सामाजिक दबाव

औरतों के साथ काम करने वाली कई संस्थाओं से बातचीत करके सामने आया कि कानून के साथ-साथ सामाजिक दबाव को भी हथियार की तरह इस्तेमाल करना चाहिए। अगर हम चाहती हैं कि औरत को इंसाफ़ मिले तो हमें सिर्फ़ किसी एक चीज़ के भरोसे नहीं बैठना चाहिए वरना निराशा होगी। (शेष पृष्ठ 31 पर)

महिला जागृति केंद्र गोमिया की एक कार्यकर्ता ने बताया—"मारपीट के मामलों में हम औरतों की पंचायत बैठाती हैं। पति का मुंह काला करके उसका जुलूस भी निकालती हैं।"

राजस्थान के आदिवासी क्षेत्र डूंगरपुर में काम करने वाली एक कार्यकर्ता ने बताया—"जब भी महाजन गिरवी रखे गहने वापिस लौटाने में आनाकानी करते हैं हमारा अनुभव तो यह है कि धरना देने, मोर्चा निकालने से काम बन जाता है।"

चतुरंगी सेना

इसी तरह के अनुभव अन्य कार्यकर्ताओं के भी हैं। मामला चाहे दहेज़ का हो या बलात्कार का, मारपीट का हो या हत्या का हमें हर तरीके से उस व्यक्ति को सज़ा दिलाने की कोशिश करनी चाहिए। कानून का सहारा भी लें। समाज, मोहल्ले में उसकी पोल खोलें। उसे अपमानित और शर्मिंदा करें। उसकी नौकरी की जगह पर शिकायत करें। औरतों की पंचायत बैठाएं। अगर थाने के लोग रपट नहीं लिखते हैं या अन्य तरीकों से सहयोग नहीं करते तो धरना दें, नारे लगाएं, जुलूस निकालें। इन सबके लिए औरतों को संगठित करें।

आज न्याय पाने की इस लड़ाई में औरतों को अपनी रणनीतियां तैयार करनी पड़ेंगी और बनानी पड़ेगी चतुरंगी सेना। □

विवाह और कानून

हिंदू विवाह क़ानून 1955 के अनुसार—

- ऊंची जाति की लड़की का ब्याह नीची जाति के लड़के से हो सकता है।
- विधवा का ब्याह हो सकता है।
- कोई व्यक्ति उस समय तक दुबारा ब्याह नहीं कर सकता जब तक उसकी पहली पत्नी या पति जीवित हो और उनका तलाक या ब्याह रद्द न हुआ हो।
- 18 साल से कम की लड़की और 21 साल से कम के लड़के का ब्याह कानूनन अपराध है।
- कानून पागल, नपुंसक, लाइलाज छूत के रोगी को ब्याह की इज़ाजत नहीं देता।
- किसी नज़दीकी रिश्तेदार के साथ ब्याह वैध नहीं है। सौतेले पिता से भी शादी नहीं हो सकती।

तलाक़ के आधार

सिर्फ स्त्री किन सूरतों में तलाक ले सकती है।

- यदि पति दूसरा ब्याह कर ले।
- यदि पति बलात्कारी, समलैंगिक रुचि वाला अथवा पशुगमन का दोषी ठहराया जाए।
- यदि अदालत में गुज़ारे खर्चे की डिक्री होने के बाद पति-पत्नी एक साल तक संभोग न करें।
- कम उम्र में ब्याही लड़की (18 वर्ष से कम) बड़ी होने पर ब्याह रद्द करा सकती है।

किन सूरतों में पति-पत्नी दोनों तलाक़ ले सकते हैं?

- आपसी समझौते से
- ब्याह के बाद पति या पत्नी अपनी इच्छा से अन्य व्यक्ति के साथ संभोग करे तो दूसरा पक्ष तलाक ले सकता है।
- यदि एक पक्ष दूसरे के साथ बुरा व्यवहार करे या अत्याचार करे तो पीड़ित पक्ष तलाक ले सकता है।
- यदि पति या पत्नी दूसरे पक्ष को कम से कम दो साल तक छोड़ दे और उससे किसी तरह का संबंध न रखे तो दोषी पक्ष से तलाक लिया जा सकता है।
- यदि कोई भी पक्ष धर्म बदल ले।

- यदि ब्याह के बाद एक पक्ष को लाइलाज पागलपन का या अन्य दिमागी रोग हो जाए और जिसके कारण दोनों साथ न रह सकें तो पीड़ित पक्ष तलाक ले सकता है।
- किसी एक पक्ष को लाइलाज कोढ़ या गुप्तांग रोग हो जाए तो दूसरा पक्ष तलाक़ ले सकता है।
- यदि एक पक्ष सांसारिक जीवन छोड़कर सन्यास ले ले।
- यदि पति या पत्नी कम से कम 7 साल से लापता हो और उसका कोई सुराग न मिले।

पति के नाजायज़ संबंध

आज जिस बात से स्त्रियां सबसे अधिक परेशान हैं वह है पति का किसी दूसरी स्त्री में रुचि और उससे संबंध। कानून स्त्री को यह अधिकार देता है कि वह इस आधार पर तलाक की मांग कर सकती है।

इसमें दो मुश्किलें हैं। एक, इस शिकायत पर वह पति को सज़ा नहीं दिलवा सकती। वह केवल तलाक की मांग कर सकती है। दो, उसे अवैध संबंध का सबूत देना होगा।

क़ानून में पति के अवैध संबंधों की शिकायत उसकी पत्नी नहीं कर सकती। जिस स्त्री से अवैध संबंध है उसका पति ही शिकायत कर सकता है। तलाक के लिए यह भी साबित करना ज़रूरी है कि पति का दूसरी स्त्री से शारीरिक संबंध बराबर बना हुआ है। सिर्फ एक बार का शारीरिक संबंध तलाक़ के लिए काफी नहीं माना जाता।

वैवाहिक अपराध और सजा

पत्नी या पति के होते हुए कोई दूसरी शादी करता है तो ऐसे पुरुष या औरत को सात साल तक की कैद और जुर्माने की सजा हो सकती है।

पति या पत्नी के होते हुए दूसरी शादी करने वाली पार्टी से पिछली शादी का हाल छिपाने पर 10 साल तक कैद और जुर्माने की सजा हो सकती है।

गैर-कानूनी ढंग और धोखाधड़ी से शादी करने पर सात साल तक की कैद और जुर्माने की सज़ा दी जा सकती है।

हिंदू विवाह अधिनियम के तहत यदि कोई पति पत्नी से क्रूरतापूर्वक व्यवहार करता है और पत्नी पति से छुटकारा पाना चाहती है तो वह तलाक के लिए कचहरी में दावा कर सकती है।

• नशे की आदत में मारपीट करना।

केवल शारीरिक यातना ही क्रूरता नहीं है। मानसिक रूप से परेशान करना भी क्रूरता है। कई ऐसे मामले सामने आए हैं कि जहां पत्नी नौकरी करती है उसके दफ्तर में उसे बदनाम करने के लिए चिट्ठी लिख देते हैं या रिश्तेदारों को चिट्ठी लिख देते हैं। यह तलाक़ का आधार बन सकता है।

यदि पति जानबूझकर पत्नी को पागल करार करता है और कोर्ट में यह साबित किया जा सकता है तो उसे कानून द्वारा सजा दिलवाई जा सकती है।

क्या पति पत्नी को घर से निकाल सकता है? कई बार पति पत्नी को परेशान करने या भरण पोषण के बोझ से बचने के लिए, या किसी दूसरी औरत में रुचि रखने की वजह से या सिर्फ गुस्से में आकर पत्नी को घर से बाहर निकाल देता है। मजबूरन पत्नी को अपने रिश्तेदारों की मोहताज बनकर रहना पड़ता है। बच्चे होने पर हालत और भी खराब हो जाती है।

ऐसी हालत में पत्नी अलग रहते हुए भी पति से गुजारा-खर्चा पाने की हक़दार है। अगर वह दो साल से ज़्यादा अलग रही है तो तलाक की भी मांग कर सकती है। मुकदमे के दौरान भी वह गुज़ारे-खर्चे की हक़दार है। अगर वह तलाक न लेना चाहे तो अदालत से प्रार्थना कर सकती है कि उसके पति को आदेश दिया जाए वह ठीक से शांतिपूर्वक उसे अपने साथ रखे। अदालत पूरी कोशिश करेगी कि उनका घर टूटने से बच जाए।

जबर्दस्ती ब्याह

अगर ब्याह लड़की या लड़के की मर्जी के खिलाफ़ या उससे जबर्दस्ती हां कहलवाकर हुआ है तो ब्याह के एक साल के अंदर उसे रद्द कराया जा सकता है।

ब्याह के समय यदि लड़का या लड़की किसी भी पक्ष के लोग कोई ऐसी महत्वपूर्ण बात छिपाते हैं जिसके पता होने पर ब्याह रुक सकता था, उसका बाद में पता चलने पर एक साल के अंदर ब्याह रद्द कराया जा सकता है। यह अधिकार दोनों पक्षों को है। □

एक गीत

सारी महिलाओं ने दुखड़ा सुनाया
वो भूल जाने के काबिल नहीं।
सरकार ने कानून बनाए
वो ज़ारी रखने के काबिल नहीं
गांव-गांव मे ठेके खुलवाए
जो रहने के काबिल नहीं
अत्याचार महिलाओं पे हुए
वह सहने के काबिल नहीं
ये लड़ाई महिलाओं ने छेड़ी
वो मन में रखने के काबिल नहीं।

साभार
युवा-साथिन, सूत्र
(हि.प्र.)

जमीन जायदाद में औरतों के हक

1956 में बने हिंदू उत्तराधिकार कानून में औरतों को काफी हक़ दिए गए हैं।

औरतों के कुछ महत्वपूर्ण हक़ —

- पुरुष की जायदाद में उसकी विधवा पत्नी, मां, बेटियों और बेटों को बराबर का हिस्सा मिलता है।
- पिता से पहले मरी लड़की या मरे लड़के के बच्चों को भी हिस्सा मिलेगा। उतना ही जितना उनकी मां या उनके पिता को मिलता।
- पिता के रिहायशी मकान में कुंवारी लड़की, विधवा लड़की या ऐसी लड़की जिसके पति ने उसे छोड़ दिया हो या तलाक दे दिया हो, रहने की हक़दार है। वह भाइयों की मर्जी पर नहीं है। वह क़ानूनन अपने पिता के मकान में रह सकती है।

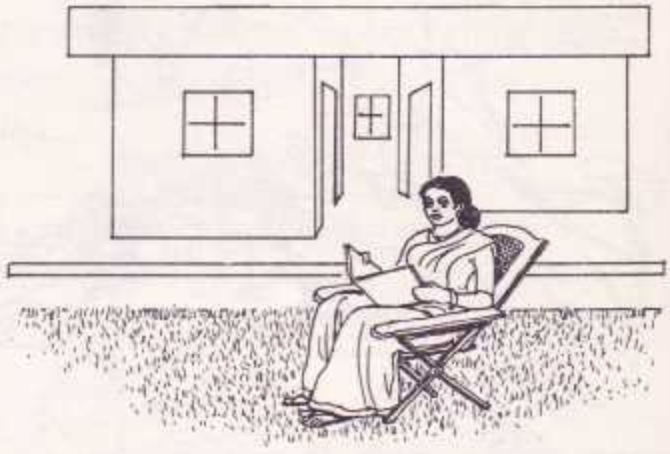

- पति की मृत्यु के समय यदि पत्नी के पेट में बच्चा है तो बच्चा भी जायदाद में हिस्से का हक़दार है।
- औरत का अपनी जायदाद पर पूरा मालिकाना हक़ होता है। वह उसे बेच सकती है, गिरवी रख सकती है या जैसे चाहे, जिसको चाहे दे सकती है।
- औरत के नाम जो भी जायदाद, जेवर या धन है जो उसे शादी के पहले, शादी के समय या शादी के बाद में मिलता है वह उसका स्त्री-धन है। उस पर उसका पूरा हक़ होता है।
- विरासत में, उपहार में मिली या तलाक़ के बाद गुज़ारे-भत्ते के लिए मिली संपत्ति पर औरत का पूरा हक़ होता है। वह उसके बारे में अपनी मर्जी की वसीयत कर सकती है।
- विरासत में संपत्ति मिलने के बाद कोई विधवा दुबारा ब्याह कर ले तो उसे संपत्ति लौटाने के

लिए मज़बूर नहीं किया जा सकता। उस पर उसका कानूनन हक़ बना रहता है।

- नए विरासत क़ानून में विधवा का चाल-चलन ख़राब बताकर उसका हक़ नहीं मारा जा सकता।
- संयुक्त हिंदू परिवार में विधवा अपने पति के हिस्से की वारिस है। लेकिन उसे भागीदार नहीं माना जाता है।

इतने हक़ों के मिलने पर भी कानून में कई खामिया हैं। सबसे बड़ी कमी यह है कि चाहे वह मृतक की पत्नी हो या लड़की, खुद बंटवारे की अपील दायर नहीं कर सकती। जब कोई पुरुष वारिस बंटवारा कराएगा तो उसे भी जायदाद में हिस्सा मिल जाएगा। □

दहेज संबंधी कानून

- दहेज लेने व देने वाले दोनों जुर्म के भागीदार हैं। दहेज की मांग करने वालों की सज़ा कम से कम 6 महीने की जेल और जुर्माना (धारा 5)।
- दहेज लिया है साबित होने पर कम से कम 5 साल की कैद और 15000 रु० तक जुर्माना (धारा 3)।
- कोई भी विज्ञापन जिसमें संपत्ति या धन ब्याह में देने की बात हो। 6 महीने की कैद और 15000 रु० तक जुर्माना हो सकता है (धारा 4अ)।
- यदि लड़की के बजाए स्त्री-धन किसी अन्य के हाथ में दिया गया हो तो उस व्यक्ति को वह धन व सामान लड़की को ब्याह के 3 माह के भीतर देना होगा। अगर 3 महीने के भीतर न दिया गया हो तो यह अपराध माना जाएगा।

•दहेज लेने और देने वाले दोनो, कानून की नजर में अपराधी हैं।

कम से कम 6 महीने की कैद और 15000 रु० जुर्माना। यदि वह स्त्री-धन पति या सास-ससुर के हाथ में है तो उसे धारा 3 या 6 के तहत् सज़ा दी जाएगी (धारा 6)।

धारा 7 के तहत् दहेज लेने वाले को अपराधी माना जाएगा और उसे जमानत पर नहीं छोड़ा जा सकता। महिला संगठन भी अपराध की रपट दर्ज करा सकते हैं जिससे अपराधी को सज़ा दिलवाने में मदद मिलेगी।

धारा 8 में अपने को निर्दोष साबित करना अभियुक्त की अपनी ज़िम्मेदारी होगी।

दहेज संबंधी मृत्यु में कम से कम 8 साल की सज़ा और 10,000 रु० जुर्माना। सज़ा बढ़कर आजीवन कैद भी हो सकती है (धारा 304ब)।

धारा 113बी में साफ कहा गया है कि जहां लड़की की मौत से पहले उसे दहेज की मांग को लेकर तंग किया गया था वहां उसके पति व रिश्तेदारों को दहेज मृत्यु के लिए जिम्मेदार ठहराया जाएगा। □

गुजारा-भत्ता कानून

हिंदू कानून के तहत पत्नी, विधवा, नाबालिग बच्चे और बेसहारा मां-बाप गुजारा-भत्ता पा सकते हैं। यह कानून अन्य धर्मों के लोगों (मुस्लिम, ईसाई आदि) पर लागू नहीं होता। संपत्ति की विरासत और गुजारा-भत्ता इंसान के वैयक्तिक कानून के तहत मिलता है। महिला संगठनों ने इसके खिलाफ आवाज़ उठाई लेकिन अभी भी सब धर्मों के लोगों पर इस मामले में एक-सा कानून लागू नहीं है। इस लेख में दी गई जानकारी हिंदू कानून के तहत है।

पत्नी का गुजारा हक़

नीचे दिए हालात में पति से अलग रह कर भी पत्नी को गुजारा-भत्ता पाने का हक़ है—

- यदि पति ने बिना उचित कारण के पत्नी की मर्जी के खिलाफ़ उसे छोड़ दिया है या जानबूझकर परवाह न करता हो।
- पति पत्नी पर इतना जुल्म करता हो कि पत्नी को उसके साथ रहना नुकसान पहुंचाने वाला और खतरनाक लगे।
- पति को फैलनेवाली कोढ़ की बीमारी हो।
- पति ने दूसरी शादी कर ली हो।
- पति घर में या कहीं दूसरी जगह किसी रखैल के साथ रहता हो।
- पति अपना धर्म बदल ले। हिंदू न रहा हो।

अगर पत्नी का चालचलन ठीक न हो या वह धर्म बदल ले और हिंदू न रही हो तो उसे गुजारा पाने का हक़ नहीं है।

विधवा का गुजारा हक़

पति के मरने के बाद हिंदू औरत के गुजारे की जिम्मेदारी ससुर की होती है। वह हक़दार होगी—

- यदि उसकी अपनी आमदनी और जायदाद गुजारे के लायक न हो।
- वह अपने पति, माता या पिता की जायदाद से गुजारा न पा सके।
- अपने बेटे या बेटी या उनमें से किसी की जायदाद से खर्च न ले सके।

यदि ससुर के पास कोई खानदानी जायदाद नहीं है जिससे कि वह बहू को खर्चा दे सके या बहू को उसका हिस्सा मिल चुका है तो ससुर उसे गुजारा देने के लिए मज़बूर नहीं है।

मां-बाप और बच्चों का गुजारा हक़

हर हिंदू मर्द और औरत का कर्त्तव्य है कि वह अपने बच्चों (जायज, नाजायज) और बूढ़े या अपाहिज मां-बाप को गुजारा-खर्च दे। बच्चे केवल 18 साल की उम्र तक गुजारा पा सकते हैं। कुंवारी लड़की के लिए उम्र की पाबंदी नहीं है। अगर उसके पास अपनी आमदनी का ज़रिया नहीं है तो वह अपने मां-बाप से गुजारा पा सकती है।

गरीब मां-बाप बेटे और बेटी दोनों से कानूनन गुजारा पाने के हक़दार हैं।

तलाक के मुकदमे के दौरान गुजारा हक़

तलाक के मुकदमे के दौरान भी पत्नी गुजारा खर्च की हक़दार है। फौजदारी कानून की धारा

125 के तहत पत्नी को तुरंत 500 रु० तक का गुजारा खर्चा मिल सकता है।

अवैध ब्याह की स्थिति

अगर किसी स्त्री का ब्याह ग़ैर-क़ानूनी है तो वह गुजारे-भत्ते की हक़दार नहीं है। अगर एक पत्नी या पति के रहते कोई पुरुष या स्त्री दूसरा ब्याह कर ले तो हिंदू विवाह-अधिनियम के तहत् यह ब्याह कानूनी नहीं माना जाएगा। ऐसे मामले में दूसरी पत्नी को गुजारा-भत्ता नहीं मिल सकता। दूसरी पत्नी को अगर पहले ब्याह की जानकारी नहीं थी तो भी अदालत में उसकी यह दलील नहीं मानी जाएगी। अगर ब्याह सिर्फ मालाएं बदल कर बिना किसी गवाहों के हुआ है तो उसे वैध नहीं माना जाएगा।

अवैध पत्नी भले ही गुजारे-भत्ते की हक़दार नहीं, लेकिन अवैध संतान भरण-पोषण की हक़दार है। अवैध होना बच्चे का दोष नहीं। लेकिन यह साबित करना होगा कि बच्चा इस पति का है।

पत्नी अगर पति के व्यवहार से तंग होकर अलग रहती है और दूसरी शादी नहीं करती है तो वह गुजारे-भत्ते की हक़दार है।

मां-बाप का तलाक हो जाने के बाद भी बच्चों का अपने पिता की जायदाद में हक़ बना रहता है।

अदालत के फैसले के बाद भी कई पति हर महीने गुजारा-खर्च देने में ढिलाई करते हैं। इससे औरतों को काफ़ी परेशानी उठानी पड़ती है। सामूहिक या किसी तरह का दबाव डालकर एक बार में जितना मिल सके उतना रुपया लेना भी एक तरीका है।

गुजारा-भत्ता पाने के लिए

गुजारा-भत्ता पाने के लिए प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट की अदालत में एक आवेदन-पत्र दाखिल करना होगा। पत्नी को अदालत में यह साबित करना होगा कि उसका पति उसकी ओर से बेपरवाह है और उसे भरण-पोषण देने से इंकार करता है।

अगर कोई पत्नी अपनी इच्छा से अलग रहती है या कमाती है तो उसे अदालत द्वारा गुजारा-भत्ता नहीं मिल सकता। अगर पति खुद ही गरीब, बेरोजगार या मोहताज़ है तो भी पत्नी को गुजारा-भत्ता नहीं मिल सकता।

अदालत में आवेदन-पत्र के साथ पति की आय का ब्यौरा भी देना होगा। फिर मजिस्ट्रेट एक नोटिस पति के नाम जारी करता है। यदि उसका पति नोटिस मिल जाने पर भी स्वयं या अपने वकील द्वारा अदालत में हाज़िर नहीं होता तो अदालत आवेदन देने वाली स्त्री को सही मानकर एकतरफा कार्यवाही कर सकती है।

अगर पति हाजिर होता है तो उसे अपनी बात पेश करनी होती है। स्त्री द्वारा दिए गए सबूतों के आधार पर अदालत फैसला करती है। फौजदारी क़ानून के तहत् अदालत 500 रु० मासिक तक गुजारा-भत्ता दिला सकती है। इससे ज़्यादा नहीं। गुजारा-भत्ता जिस दिन से अदालत में आवेदन-पत्र दिया गया है उस दिन से दिलाया जा सकता है। अगर पति अदालत का आदेश नहीं मानता है तो उसके खिलाफ़ वारंट ज़ारी करके उसे एक महीने या जब तक वह गुजारा-भत्ता नहीं देता तब तक के लिए जेल भेजा जा सकता है।

मारपीट पर रोक

अगर किसी औरत का पति मार-पीट करता है और औरत उस पर मुकदमा चलाना चाहती है तो उसे कुछ सबूत इकट्ठे करने होंगे।

पिटाई करते समय औरत चीखे, चिल्लाए या शोर मचाए जिससे पड़ोसियों का ध्यान उसकी ओर खिंचे। घर से निकलकर वह पड़ोस में शरण ले या महिला संगठन की शरण में जाए।

पुलिस को बुलाए या पुलिस थाने में रपट दर्ज कराए। ज़रूरत हो तो डाक्टर या अस्पताल में विस्तार से ब्यौरा दे।

जो चोटें लगी हों उनकी फोटो खिंचवाए। कचहरी में तारीखें देर से पड़ती हैं तब तक चोटों के निशान मिट सकते हैं।

हर किसी का फर्ज़ है कि होने वाले अन्याय को अनदेखा न करे। अक्सर पड़ोसी इसे दूसरे का घरेलू मामला कह कर अनदेखा कर देते हैं। पर यह अन्याय को बढ़ावा देना है।

रोज़ पिटने वाली औरत अदालत से पति पर रोक लगवा सकती है कि वह घर में नहीं घुस सकता, चाहे घर पति के नाम ही हो। अदालत पति पर मार-पीट न करने की रोक भी लगा सकती है।

गुजारा-भत्ता नहीं मिलेगा

अगर पति यह साबित कर दे कि उसकी पत्नी के किसी अन्य व्यक्ति के साथ अवैध संबंध हैं।

या वह बिना कारण उसके साथ नहीं रहना चाहती।

या आदेश जारी करने के बावजूद वह इच्छानुसार साथ-साथ रह रहे हैं।

या तालाक मिलने के बाद स्त्री दूसरी शादी कर लेती है। इस स्थिति में अदालत अपना आदेश रद्द कर सकती है।

अगर पत्नी की आमदनी है और पति की नहीं तो अदालत पति को गुजारा-भत्ता दिला सकती है।

गुजारे-भत्ते का आवेदन उस जगह की अदालत में ही दिया जा सकता है जहां पति रहता हो या स्वयं पत्नी रहती हो या पति-पत्नी परिवार समेत आखिरी बार रहे हों। □

एक हिम्मतवर कोशिश

सन् 1982 में जबलपुर शहर में एक डाक्टर नवल दुबे ने पास-पड़ौस की छः छोटी-छोटी बच्चियों के साथ बलात्कार किया था। उनमें से एक थी श्री कक्कड़ की आठ साल की बेटी। श्री कक्कड़ ने न सिर्फ़ पुलिस में रपट लिखाई बल्कि पिछले दस साल से वे यह मुकदमा लड़ते चले आ रहे हैं।

छोटी अदालत से मुकदमा बड़ी अदालत और फिर सर्वोच्च न्यायालय में पहुंचा। नवल दुबे के पास पैसे की ताक़त और बड़े अफसरों की मदद होने के बावजूद 1992 में उसे अदालत ने सात साल की कड़ी कैद और 25,000 रु० जुर्माना किया। आज स्थिति यह है कि सज़ा हो जाने के बावजूद बलात्कारी जेल से बाहर है।

यह उदाहरण न सिर्फ़ श्री कक्कड़ की हिम्मत दर्शाता है बल्कि हमारे कानून की कमज़ोरी भी। पुलिस का कहना है कि नवल दुबे लापता है इसलिए सज़ा लागू नहीं की जा सकती जबकि दुनिया जानती है यह सिर्फ़ एक बहाना है। □

शीलभंग और बलात्कार संबंधी कानून

बलात्कार के मामलों में सामाजिक सोच बदलना बहुत ज़रूरी है। इसको लड़की, महिला की इज्ज़त-आबरू लुटना न मानकर बलात्कारी को अपराधी और दंडनीय तथा शर्मनाक मानना चाहिए। इसे झूठी सामाजिक इज्ज़त का ताना-बाना न पहनाएं। अपराधी को हर संभव सज़ा दिलवाने की कोशिश करें। इन मामलों में चुप्पी की वजह से ही ये जुर्म आए दिन होते रहते हैं। कुछ माह की बच्ची से लेकर बूढ़ी औरत तक इसकी शिकार हो सकती हैं। बलात्कारी नज़दीकी रिश्तेदार, पड़ोसी, अजनबी, पुलिस अधिकारी, सरंक्षक, नौकर या कोई भी अधिकारी हो सकता है।

छेड़खानी, डराना या परेशान करना—क्या ये अपराध हैं?

रास्ता चलते सीटी बजाना, शब्दों या हाव-भाव, कोई चीज़ दिखलाकर अश्लील इशारे करना, महिला का अपमान करना, शरीर पर हमला करना, अकेली महिला के पास उसके सतीत्व के अपमान के इरादे से ज़बरदस्ती जाना आदि ग़ैर-कानूनी है।

इन अपराधों की सज़ा—दो साल तक की कैद या जुर्माना या दोनों एक साथ हो सकते हैं।

महिला का शील या मर्यादा भंग अपराध है। इसके लिए दो साल तक की सज़ा या जुर्माना या दोनों किए जा सकते हैं।

क्या मार-पीट करना जुर्म है?

हां, भारतीय दंड संहिता की धारा 319 के तहत् पत्नी को थप्पड़ मारने से लेकर डंडे, लोहे की छड़ या तेज़ हथियार से पीटना, इसमें शामिल है। धारा 319 में चोट या अधिक चोट पहुंचाना जुर्म है। धारा 323 में जानबूझ कर चोट या ज़्यादा चोट पहुंचाना जुर्म है।

सज़ा—1 साल की कैद या 1000 रु० जुर्माना या दोनों एक साथ किये जा सकते हैं।

जुर्म की रपट कहां की जाए?

जुर्म की शिकार महिला या उसकी ओर से कोई दूसरा व्यक्ति पुलिस में रपट लिखा सकता है।

सज़ा जुर्म की संगीनता पर निर्भर होगी। चोट मामूली है या गहरी है, इस पर सज़ा तय की जाएगी।

बलात्कार

बलात्कार के क़ानून में 1983 में संशोधन किया गया और धारा 375 के साथ धारा 376 क, ख, ग, घ जोड़ दी गईं।

इनके अनुसार नीचे लिखी परिस्थितियों में संभोग जुर्म होता है—

1. महिला की इच्छा के खिलाफ़।
2. बिना महिला की सहमति के।
3. सहमति डरा धमकाकर ली गई हो।
4. सहमति धोखे से ली गई हो। बिना कानूनी ब्याह के विश्वास दिलाया हो कि वे पति-पत्नी हैं।

5. महिला की सहमति नशे की स्थिति में या पागलपन, मानसिक असंतुलन की स्थिति में ली गई हो।
6. सहमति के बिना या सहमति के साथ अगर लड़की की उम्र 16 वर्ष या उससे कम हो।

कस्टोडियल रेप

हिरासत में बलात्कार को 'कस्टोडियल रेप' भी कहते हैं।

1. यदि जुर्म थाने में किया गया है, जहां वह काम करता हो।
2. किसी भी थाने के अहाते में किया गया हो, चाहे वहां उसकी ड्यूटी लगती हो या न लगती हो।
3. उस महिला के साथ हो जो उस अधिकारी या उसके मातहत कर्मचारी की हिरासत में हो।
4. सरकारी कर्मचारी होने के नाते अपनी सरकारी स्थिति का लाभ उठाता है और सरकारी रूप में अपनी या अपने मातहत कर्मचारी की हिरासत में महिला के साथ बलात्कार करता है।
5. कानून के अनुसार स्थापित जेल, हवालात या दूसरी हिरासत की जगह या महिला/बाल संस्था के बंदोबस्त में अधिकारी/कर्मचारी अपनी सरकारी स्थिति का लाभ उठाकर जेल, हवालात, महिला या बाल संस्था में रहने वाली के साथ बलात्कार करता है।
6. अस्पताल के बंदोबस्त में अधिकारी या कर्मचारी अपनी सरकारी स्थिति का लाभ उठाकर किसी महिला के साथ बलात्कार करता है।
7. समूह बलात्कार करता है।

'कस्टोडियल रेप' में बलात्कारी तब तक गुनाहगार माना जाएगा जब तक वह बेकसूर साबित न हो जाए। बलात्कार के सामान्य मामलों में उसका गुनाह साबित करने की जिम्मेदारी इल्जाम लगाने वाले पर होगी।

बलात्कार के कानून में यह संशोधन उस समय किया गया जब एक सरकारी कर्मचारी के द्वारा दो नाबालिग लड़कियों पर हमला करने और उनमें से एक के साथ बलात्कार के जुर्म में सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला दिया कि इस जुर्म के लिए किसी गवाही की ज़रूरत नहीं है।

सबूत

अगर किसी के साथ बलात्कार हुआ है तो नीचे लिखे सबूत अदालत में काम आते हैं।

महिला की उम्र तय करने के लिए जन्म संबंधी प्रमाण-पत्र। यदि यह न हो तो डाक्टरी राय ली जाती है।

डाक्टरी सर्टीफिकेट—महिला के गुप्त अंगों एवं शरीर के अन्य हिस्सों पर चोट। महिला या मुजरिम के कपड़ों पर शुक्राणु और खून के धब्बे। बलात्कारी के शरीर पर महिला के बालों का पाया जाना आदि।

रासायनिक जांच—बलात्कार की शिकार महिला के कपड़ों की रासायनिक जांच।

महिला को अपने कपड़े रपट लिखाने जाते समय साथ ले जाने चाहिए।

शिकार महिला का बयान—1983 में क़ानून में एक और संशोधन किया गया है। यदि मुजरिम द्वारा संभोग किया जाना साबित हो जाता है और सिर्फ यह सवाल रह जाता है कि महिला की सहमति थी या नहीं तो महिला अगर यह बयान देती है कि उसकी सहमति नहीं थी तो अदालत

को यह बयान मानना होगा।

अगर शिकार महिला की मृत्यु हो रही है और उस समय वह कुछ बयान देती है तो उसे ही गवाही माना जाएगा।

अगर शिकायत करने वाला पक्ष मुजरिम की डाक्टरी जांच की मांग करता है तो उसकी डाक्टरी जांच करवानी होगी। इससे अपराध प्रमाणित होने का सबूत मिल सकता है।

मुजरिम अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए भी डाक्टरी जांच की मांग कर सकता है।

डाक्टरी जांच सिर्फ़ पंजीकृत डाक्टर द्वारा ही होनी चाहिए।

यह जांच जल्दी से जल्दी होनी चाहिए। जांच में देरी होने से कई सबूत नष्ट हो जाने का डर है।

सुप्रीम कोर्ट ने अभी हाल में एक मामले में यह फैसला दिया है कि बहुत भीतरी इलाके के गांव में रह रही गरीब महिला के लिए डाक्टरी सर्टीफिकेट जुर्म साबित करने के लिए ज़रूरी नहीं है।

बलात्कार के लिए सज़ा

- कम से कम 7 साल से 10 साल की कैद और ज़्यादा से ज़्यादा उम्र-कैद और जुर्माना।
- अपनी पत्नी (18 साल से छोटी) से बलात्कार की सजा 2 साल की कैद या जुर्माना या दोनों हैं।
- हिरासत में बलात्कार करने की सज़ा कम से कम 10 साल की सख्त कैद या उम्र-कैद जुमनि सहित।
- एक गर्भवती या 12 साल से छोटी लड़की के साथ बलात्कार करने की सज़ा भी हिरासत में बलात्कार वाली होगी।
- समूह बलात्कार में सभी बराबर के मुजरिम माने जाएंगे। अगर बलात्कार का जुर्म साबित हो जाता है तो सभी को अलग-अलग बराबर सजा दी जाएगी। □

कुछ ऐतिहासिक मामले

यों तो नारी आंदोलन की शुरुआत पिछली सदी से जोड़ कर देखी जाती है। सुधार आंदोलन और राष्ट्रीय आंदोलन में इसके बीज ढूंढे जाते हैं। वास्तव में हमारे देश में औरतों के मुद्दों की तरफ ध्यान गया सत्तर के दशक में। तब नारी आंदोलन की जो लहर उठी वह फिर मज़बूत होती चली गई। आज दिनों दिन उसे ताक़त मिल रही है। छोटे-छोटे गांवों और कस्बों में, आदिवासी क्षेत्रों में औरतें अपने हक़ों की, स्वतंत्र व्यक्तित्व की बात उठाती हैं। महिला समूह उठ रहे हैं। जंगलों, खेती, पानी, परिवार नियोजन जैसे मुद्दों पर औरतें अपनी राय देती हैं। एक समझ रखती हैं। इन सबकी शुरुआत हुई थी सन् 1977 के आस-पास। यह आपात स्थिति के बाद का ज़माना था। आमतौर पर लोग मानवीय स्वतन्त्रता और हक़ों की बात कर रहे थे। दबाव और अत्याचार जैसे मुद्दों पर सोच रहे थे।

मथुरा बलात्कार

"महाराष्ट्र के आदिवासी क्षेत्र की एक चौदह साल की लड़की मथुरा के साथ पुलिस थाने में गनपत और तुकाराम नाम के दो सिपाहियों ने बलात्कार किया। मथुरा के परिवार वाले और गांव के लोग थाने के बाहर उसे ले जाने के इंतजार में बैठे थे। उच्चतम न्यायालय ने पुलिस वालों को निर्दोष करार देकर बरी कर दिया। फैसले में कहा गया कि मथुरा का चरित्र अच्छा नहीं था। उसे संभोग की आदत थी इसलिए शायद यह उसकी मर्जी से हुआ। इस फैसले से सारे देश में कार्यकर्ताओं, बुद्धिजीवियों के बीच गुस्से की लहर दौड़ गई। जगह-जगह संगठन और समूह उठ खड़े हुए। इस विषय में लिखा गया, नाटक किए गए। हर तरह से विरोध प्रदर्शन हुआ।

इन्हीं दिनों दिल्ली के कुछ महिला समूहों ने औरतों के तथाकथित 'आत्महत्या' और दुर्घटना के मामलों की जांच की और पाया कि ज़्यादातर ससुराल वालों द्वारा की गई हत्याएं थीं। दिल्ली में लगभग 30 महिला समूहों ने मिल कर 'दहेज विरोधी चेतना मंच' बनाया।

रमीज़ा बी का मामला

सन् 1978 में हैदराबाद में एक दिन रमीज़ा बी अपने पति के साथ रात को सिनेमा देख कर लौट रही थी। रास्ते में उसे रोक कर पुलिसवालों ने उसे वेश्यावृत्ति के आरोप में पकड़ लिया। उसके पति को इतना मारा कि कुछ दिन बाद वह मर गया। रमीज़ा बी के साथ पुलिस ने बलात्कार किया।

सारे शहर में जनआक्रोश फैल गया। लोग विरोध में सड़कों पर निकल आए, थाने को जला दिया। यह गुस्सा सारे आंध्र प्रदेश में फैल गया। इस तरह से तो कोई भी औरत सुरक्षित नहीं है। विरोध की इस लहर में हुई गोलीबारी में 26 लोग मारे गए। सरकार को जांच कमेटी बैठानी पड़ी। जिसके नतीजों के अनुसार पुलिस ने न सिर्फ़ रमीज़ा के साथ बलात्कार किया, उसके पति की हत्या भी की तथा झूठे सबूत और गवाह पेश किए।

गुंताबेन की कहानी

1986 में गुजरात के भरूच जिले की एक आदिवासी औरत गुंताबेन के साथ पुलिस ने सामूहिक बलात्कार किया। कई संगठनों ने मिल कर इस मामले की शिकायत सर्वोच्च न्यायालय से की। जांच कमेटी बैठाई गई। 584 लोगों से बातचीत करके कमेटी ने नौ लोगों को दोषी पाया।

माया त्यागी का मामला

जून 1980 में खाते-पीते परिवार की औरत माया त्यागी अपने पति और रिश्तेदारों के साथ कार में सफर कर रही थी। उत्तर प्रदेश के बागपत शहर में गाड़ी खराब होने की वजह से रुकना पड़ा। दो पुलिस वालों ने गाड़ी में बैठी माया के साथ छेड़छाड़ और बदतमीजी की। इस पर उसके पति और रिश्तेदारों ने उन पुलिसवालों की धुनाई की।

थोड़ी देर में ही कई पुलिसवाले आए और उन्होंने माया के पति सहित तीन लोगों को गोली मार दी। माया को घसीट कर बाहर निकाला। उसे नंगा कर के बाजार में घुमाया। थाने में उसके साथ तरह-तरह से अत्याचार किया और फिर गर्भवती माया के साथ बलात्कार किया गया। कहानी यह गढ़ी गई कि पुलिस ने तीन डाकुओं को मार डाला।

एक बार फिर सरकारी कर्मचारियों ने अपनी सरकारी ताक़त का बेजा इस्तेमाल करके न सिर्फ़ आम लोगों को मार डाला बल्कि एक बेकसूर औरत के साथ अमानवीय बर्ताव किया।

इन मामलों का असर

कुछ सालों के दौरान सरकारी कर्मचारियों द्वारा बलात्कार, दहेज हत्याओं के ऐसे मामलों ने लोगों में चेतना पैदा की। औरतों के साथ होने वाली हिंसा बहस का मुद्दा बनी। वकीलों, छात्रों, कार्यकर्ताओं और अनेक पेशेवर लोगों ने आपस में जुड़ कर इस पर सोच-विचार और जांच शुरू की। इस सबसे कुछ परिणाम निकले।

1. कानूनी प्रक्रिया के औरतों के प्रति रवैये पर सवाल उठा।
2. कानून की कमज़ोरियां सामने आईं और संशोधन की मांग उठी।

3. पुलिस कर्मचारियों की धांधली पर रोशनी पड़ी।
4. औरतों के प्रति होने वाली हिंसा पर शोध सामग्री, आंकड़ों, सर्वेक्षणों के अभाव का पता चला।
5. मुसीबत में पड़ी औरतों को मदद देने वाले संगठनों और आश्रय स्थानों की कमी नज़र आई।
6. पूरे समाज की सोच, उसके दृष्टिकोण में बदलाव लाने की ज़रूरत महसूस हुई।

एक नई शुरुआत

यहीं से भारत में एक जीवन्त, सक्रिय और ताक़तवर महिला आंदोलन की शुरुआत हुई। समाज के अनेक वर्गों से औरतें इसमें जुड़ीं जिनके लिए यह जीवन का एक मकसद, जीवन का ढंग बन गया। औरत के दर्जे, समाज, परिवार में उसकी जगह, पितृसत्ता, लिंग से निश्चित भूमिका जैसे मुद्दों पर सोच विचार होने लगा। बहुत कुछ लिखा-पढ़ा और कहा जाने लगा। औरत के स्वास्थ्य से लेकर उस पर होने वाली हिंसा के संबंध में सर्वेक्षण हुए। अलग-अलग योग्यताओं और हुनर के लोगों ने अपने तरीके से औरतों की ताक़त बढ़ाने के लिए काम करना शुरू किया। नाटक खेले गए, गीत बने, जुलूस निकाले गए, धरने और मोर्चे दिए गए। क़ानूनों में संशोधन आए। औरतों के मुद्दे सामान्य महिला संस्थाओं से लेकर संसद तक में चर्चा के लिए उठाए जाने लगे।

आज मथुरा बलात्कार, सुधा गोयल हत्याकांड या रमीज़ा बी का केस भारत के महिला आंदोलन के इतिहास में मील का पत्थर बन चुके हैं।

साभार
'इश्यूस एट स्टेक'

चुप्पी की चादर में ढके अपराध

औरतों के खिलाफ़ होने वाले अपराधों के लिए कानून हैं। अपराधी के लिए दंड का विधान है, लेकिन अपराधी जब घर का ही कोई आदमी हो तो न्याय कौन दिलवाएगा? ये वे अपराध हैं जो घर की चार-दीवारी के भीतर या अपने जाने पहचाने गली-मुहल्ले में होते हैं। उन्हें करने वाले लोग अपने सगे-संबंधी या जानकार लोग होते हैं। इन अपराधों की शिकार होती हैं छोटी, कम उम्र की लड़कियां।

बाल बलात्कार

जब सारी दुनिया के परिवारों को देखते हैं, आपसी रिश्तों को समझने की कोशिश करते हैं तो एक बात पता लगती है। हर देश के समाज में कुछ रिश्तों के बीच शारीरिक संबंध रखने की मनाही है। कभी ये रिश्ते खून के होते हैं, कभी नहीं।

भारत में भी अलग-अलग इलाकों में और जातियों में इस तरह के नियम हैं। आमतौर पर सभी जगह सगे भाई-बहन, पिता-पुत्री, माता और पुत्र के बीच इस तरह का रिश्ता ग़लत माना जाता है।

यह नियम उन लोगों के लिए हैं जो बड़ी उम्र में, सोच-समझ कर अपनी इच्छा से ऐसा रिश्ता क़ायम करना चाहते हैं। परंतु हज़ारों उदाहरण ऐसे हैं जहां कम उम्र की लड़की पर घर के मर्द जैसे भाई, चाचा, मामा, पिता और दादा तक ऐसा रिश्ता थोपने की कोशिश करते हैं। तब ये सिर्फ़ समाज का नियम तोड़ना ही नहीं बल्कि उस बच्ची के प्रति अत्यन्त घिनौना अपराध हो जाता है। वह बच्ची जो नासमझ है। शरीर और बुद्धि से कच्ची है। वह अपने आपको बचा भी नहीं सकती।

जब बाड़ ही खाए तो फ़सल कौन बचाए?

घर और परिवार को वह स्थान माना जाता है जहां सुरक्षा, प्यार और आराम मिलता है। हज़ारों छोटी बच्चियों के लिए घर ही वह जगह है जहां उनके साथ यौन शोषण होता है। उनके कच्चे तन और मन को तोड़ा-मरोड़ा जाता है। जो लोग उनकी रक्षा करने वाले होने चाहिए वही उन पर ये जुल्म ढाते हैं।

इस तरह के अपराध छोटे लड़के और लड़कियों दोनों के साथ होते हैं। कानून की नज़र में ये दोनों अपराध हैं जिनके लिए सज़ा मिल सकती है। लेकिन अपराधों की रपट कौन दर्ज कराएगा। उन बच्चों को संभालने की जिम्मेदारी कौन लेगा? इसलिए यह एक ऐसा अपराध है जिसके खिलाफ़ कानून भी कुछ नहीं कर पाता। जब तक सामाजिक चेतना नहीं आती शायद ये अपराध यों ही होते रहेंगे।

कुछ ग़लतफ़हमियां

आमतौर पर लोग सोचते हैं कि अपराध सिर्फ़ बहुत गरीब तबके में या झुग्गी-झोपड़ियों में ही होते हैं। लेकिन ये धारणा ठीक नहीं है। ये अपराध न सिर्फ धनी लोगों के बीच बल्कि पढ़े-लिखे लोगों में भी होते हैं।

यह भी समझा जाता है कि ऐसी नीच हरकतें सिर्फ़ विदेशों में होती हैं जहां लोग ज़्यादा खुले हुए हैं। भारत के पारंपरिक समाज में यह सब बहुत कम है। लेकिन यह भी सोचना ग़लत है। भारत में भी इन अपराधों की संख्या बहुत ज़्यादा हैं। चूंकि ऐसे अपराधों की रपट नहीं लिखाई जाती उनके कोई आंकड़े नहीं मिलते।

लोग मानते हैं कि कुछ महीनों की या कुछ सालों की बच्ची के साथ बलात्कार या यौन अत्याचार करने वाले लोग दिमागी रूप से बीमार हैं। वे अलग से पहचाने जा सकते हैं। सच्चाई ये है कि आम दिखने वाले मर्द भी ऐसा काम कर सकते हैं। बाहरी तौर पर बहुत शिक्षित, सभ्य और सुशील दिखने वाले लोग भी बच्चियों पर अत्याचार करते देखे गए हैं।

कुछ उदाहरण

अहमदाबाद के सरकारी अस्पताल में स्त्री रोग की डाक्टर लीला बेन त्रिवेदी ने ऐसे कई मामलों की जांच की है। उन्होंने बताया कि सोलह साल से कम उम्र की पांच लड़कियों से उनके पिताओं ने, दो के साथ भाइयों ने और सतरह लड़कियों के साथ उनके चाचा, मामा या रिश्ते के भाइयों ने बलात्कार किया था। उन लड़कियों को अस्पताल भी इसलिए लाना पड़ा क्योंकि वे घायल थीं। उनके अंगों को सिलाई की ज़रूरत थी। अगर इतनी बुरी हालत न होती तो शायद घर में ही हल्दी-चूना लगा कर बात को दबा दिया जाता। लीलाबेन ने यह भी बताया कि इन सभी मामलों में से किसी में भी मां पुलिस में रपट लिखवाने को तैयार नहीं थी।

जिन मामलों में ये काम लड़कियों के बाप, भाई या दादा वगैरह करते हैं शिकायत कौन करेगा? मां जानते बूझते चुप रह जाती है। पुलिस में शिकायत करके वह कहां रहेगी? अपनी बेटी को कहां रखेगी? बाकी और बच्चों का क्या होगा?

जब ये अपराध कोई दूर के रिश्तेदार करते हैं या पड़ौसी, घरेलू नौकर, रिक्शेवाला, डाक्टर, मास्टर ऐसे जानकार लोग करते हैं तब भी आमतौर पर बात दबा दी जाती है। ज़्यादा से ज़्यादा आपसी मारपीट या किसी और ढंग से बदला लिया जाता है लेकिन पुलिस कचहरी में नहीं जाते। हमारे समाज में लड़की के कुआरेपन को उसकी जान से ज़्यादा महत्व दिया जाता है। औरत की इज्ज़त उसकी यौन पवित्रता में है इसलिए कोई नहीं चाहता कि इस हादसे का पता समाज को लगे।

आज की ज़रूरत

कुछ समय पहले तक परिवार एक ऐसा किला था जिसके भीतर किसी की जान भी ले ली तो सब जायज़ था। अब धीरे-धीरे यह बदल रहा है। औरतें खुल कर बात करने लगी हैं। उनके साथ होने वाले अत्याचारों पर चर्चा करने लगी हैं। हालांकि अभी भी वे बहुत कुछ चुपचाप सह लेती हैं। जब तक मुंह न खोला जाएगा, अपनी तकलीफों की बात नहीं की जाएगी वे समाज के सामने मुद्दा बन कर नहीं उभरेंगी। इसलिए इस समस्या को भी छिपाने के बदले बात करने की ज़रूरत है ताकि इसे रोकने की कोशिशें हो सकें।

कानून नाकाफ़ी

औरतों के बहुत से मुद्दे ऐसे हैं जिनमें कानून भी मदद नहीं कर पाता। सामाजिक सोच और दबाव उसे न्याय पाने नहीं देता। □

क्या मां-बाप बेकसूर हैं?

वीणा शिवपुरी

"पिताजी, मैं आप पर बोझ नहीं बनूंगी। कोई काम ढूंढ लूंगी लेकिन मुझे यहां से ले जाइए। आप क्यों अपनी लाड़ली बेटी को भूल गए हैं। अगर आपने इस बार भी कुछ नहीं किया तो शायद मेरा मुंह नहीं देख पाएंगे।"

"मां, मेरी जान खतरे में है। ये लोग मुझे अपने रास्ते से हटा कर अपने लड़के की दूसरी शादी करना चाहते हैं। भइया से कहो मुझे बचा लें।"

"मैंने कितनी चिट्ठियां लिखीं, आप लोग फिर भी नहीं आए। यहां मेरा एक-एक दिन मुश्किल से कटता है। मेरा दम घुटता है। रात-दिन ताने, गालियां और मारपीट। पेट में बच्चा है फिर भी तीन-तीन दिन खाना नहीं देते।"

कौन हैं ये लड़कियां?

ऐसी चिट्ठियां एक नहीं हज़ारों हैं। लेकिन आज उन चिट्ठियों को लिखने वाली बेटियां ज़िंदा नहीं हैं। उनके नाम और पते बताने का कोई फ़ायदा नहीं। महत्वपूर्ण बात यह है कि वे देश के हर कोने में थीं और आज भी हैं। कितनी ही बेटियां, अपने ससुराल से मां, बाप, भाई-भाभियों से इसी तरह की याचना करती हैं और दूसरी तरफ़ से उन्हें बार-बार यही सीख दी जाती है "बर्दाश्त करो, धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा।" जबकि हम सब अपने मन में अच्छी तरह से जानते हैं कि ठीक कभी नहीं होता। या तो वे लड़कियां मर जाती हैं, मार दी जाती हैं या फिर न्याय के लिए लड़ने की उनकी इच्छा शक्ति मर जाती है। वे सिर्फ़ एक जिंदा लाश की तरह दूसरे के हुक्म पर जीती हैं। फिर मां-बाप झूठी तसल्ली देकर क्या करते हैं?

अपने आपको धोखा देते हैं और अपनी बेटी को धोखा देते हैं।

क्या वे बेटी के दुश्मन हैं?

हम कम से कम यह मान कर चलते हैं कि लड़की का दर्जा कितना ही गिरा हुआ हो, मां-बाप पाली-पोसी लड़की को जानबूझ कर मारना नहीं चाहते। हालांकि कुछ मामलों में तो साफतौर पर यही नज़र आता है। फिर भी हम यही कहेंगे कि ज़्यादातर मामलों में या तो आर्थिक बोझ या सामाजिक दबाव से डर जाते हैं। उनके दिमाग में वही दकियानूसी धारणा बसी हुई है कि बेटी के ससुराल से लौट आने का मतलब खानदान की इज्ज़त मिट्टी में मिल जाना है।

हमारा एतराज

पहली बात तो यही है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक पूरे खानदान की इज्ज़त का बोझ औरतों पर ही क्यों डाला जाता है? चाहे वह बेटी हो या

बहू। मर्द भले ही कुछ भी करते रहें इज्ज़त को आंच नहीं आती। औरत के आंख उठाने, मुस्कुरा कर बात करने से इज्ज़त चली जाती है।

एक मिनट को मान भी लें कि हमारा समाज पिछड़ा हुआ है, यहां ब्याही बेटी लौट आए तो हज़ार बातें बनाई जाती हैं। तो क्या वह तथाकथित इज्ज़त लड़की की जान से बढ़ कर है? वो बेटी जो आपके हाड़-मांस का हिस्सा हैं, जिसे प्यार से गोद में खिलाया है। जो आप पर जान निछावर करती है। उसे यों तड़प-तड़प कर मरते हुए देखना क्या किसी भी नज़रिए से सही हो सकता है?

इन पर कौन-सा कानून लागू हो?

आज चारों तरफ़ ससुराल वालों के अत्याचार के प्रति चेतना जाग रही है। औरतों के लिए अलग पुलिस सैल बनाए जा रहे हैं। कानूनों को सख्त बनाया जा रहा है लेकिन उन मां-बाप पर कोई उंगली नहीं उठाता जो जानबूझ कर लड़की को मरने के लिए उसकी ससुराल में छोड़ देते हैं। ससुराल वालों के अपराध की गंभीरता को मानते हुए मां-बाप को भी पूरी तरह बेकसूर नहीं ठहराया जा सकता। किसी भी लड़की के आत्महत्या करने या मार दिए जाने के पीछे महीनों और सालों के अत्याचार का इतिहास होता है। हमारा अनुभव है कि आमतौर पर मां-बाप को इसके बारे में पता होता है लेकिन फिर भी वे पत्थर दिल बन जाते हैं।

आंखें खोलिए

दो साल पहले एक धनी घर की बहू को जला कर मार दिया गया। मुकदमा चला। अखबारों में छपा। तब लड़की के मां-बाप ने बताया कि "हम पिछले सालों में उन्हें लाखों रुपया और सामान दे चुके हैं। उनकी हर मांग पूरी करते आए हैं। कई महीनों से तो लड़की का खाना भी रोज़ हमारे घर से जाता था क्योंकि ससुराल वाले उसे खाना भी नहीं देते थे।"

क्या ऐसे मां-बाप किसी सहानुभूति के पात्र हैं? नहीं। मेरी नज़र में वे भी इस हत्या के भागीदार हैं। आज ज़रूरत है कि ऐसे अपराधियों के चेहरे भी बेनकाब किए जाएं। सिर्फ़ मां-बाप या मायके वाले कहलाकर वे अपने अपराध से मुंह नहीं चुरा सकते। □

बाल-विवाह क़ानून

— यदि 18 वर्ष से ऊपर और 21 वर्ष से कम उम्र का कोई लड़का ऐसी लड़की से विवाह करता है, जिसकी उम्र 18 वर्ष से कम हो तो उसे 15 दिन तक की साधारण कैद की सज़ा हो सकती है या एक हजार रुपये तक जुर्माना हो सकता है या दोनों सज़ाएं साथ हो सकती हैं। यदि पुरुष 21 वर्ष से अधिक आयु का हो तो कैद की अवधि तीन महीने तक हो सकती है।

— जो भी व्यक्ति बाल-विवाह करता या करवाता है उसे तीन माह का साधारण कारावास और जुर्माने की सज़ा हो सकती है।

— यदि कोई नाबालिग बाल-विवाह करता है तो उसके माता-पिता, अभिभावक या दूसरे संरक्षक, जो बाल-विवाह की अनुमति देता है, उसे बढ़ावा देता है, जो बाल-विवाह को नहीं रोकता है, उसे तीन माह के साधारण कारावास और जुर्माने की सज़ा हो सकती है। पर इस अपराध के लिए किसी महिला को कारावास की सज़ा नहीं दी जाएगी।

मां-बाप का हक़ बच्चों का फर्ज़

वृद्धाश्रम में रहने वाली सभी औरतों में से जानकी बहन सबसे अलग दिखती थी। ज़्यादातर चुपचाप रहती, अपने काम से काम रखती थीं। बाक़ी सब छोटी-मोटी चीज़ों के लिए आपस में लड़तीं। अपने बेटों-रिश्तेदारों को कोसतीं। लेकिन जानकी बहन के घर में कोई है या नहीं यह भी किसी को नहीं मालूम था। जानकी बहन जब भी खाली होतीं, तो बगीचे में एक पेड़ के नीचे बैठ कर माला जपती रहती थीं।

जानकी बहन परेशान

आश्रम में कुछ तो बिलकुल अनाथ औरतें थीं जिनका खर्च आश्रम के ट्रस्ट से मिलता था। कुछ औरतों के रिश्तेदार उनके लिए महीने का खर्चा भेजते थे। आश्रम की संचालक बहनजी को मालूम था कि आजकल जानकी बहन बहुत परेशान हैं। पिछले तीन महीने से उनके घर से पैसा नहीं आया है। संचालक बहनजी ने समाज सेवा के लिए आने वाली कार्यकर्ता सुमित्रा से कहा कि वह जानकी बहन से बात करें।

मन की व्यथा

सुमित्रा ने बड़े प्यार से जानकी बहन का मन टटोला। उसने कहा कि अगर आपके घर में कोई करने वाला नहीं है तो आपके खर्चे के लिए दान की व्यवस्था हो सकती है। आप बेकार चिंता न करें। सिर्फ़ आपको यह लिख कर देना होगा कि मेरा कोई सगा संबंधी नहीं है।

"नहीं, नहीं सुमित्रा। ऐसा अशुभ मत बोलो।" जानकी बहन के मन की व्यथा फूट पड़ी।

वही स्वार्थ की कहानी

"सुमित्रा, मेरा बेटा-बहू, पोते वाला भरापूरा परिवार है। भगवान उन्हें सुखी रखे।"

"लेकिन फिर आप इस वृद्धाश्रम में क्यों रहती हैं?" सुमित्रा ने पूछा।

जानकी बहन ने अपनी कहानी सुनाई। वह अच्छे खाते-पीते घर की बहू थीं। एक ही बेटा, खूब लाड़ प्यार से पाला था। बेटे की शादी की। बहू घर में आई। जानकी बहन ने अपना सारा ज़ेवर उसे दे दिया। कुछ दिनों में जानकी बहन के पति चल बसे। जानकी बहन ने बेटे-बहू का मुंह देख कर सबर कर लिया। ऐसे लायक बेटा-बहू के साथ बुढ़ापा आराम से कट जाएगा। दोनों जानकी बहन की खूब देखभाल करते।

एक साल बाद पहला पोता हुआ। जानकी बहन फूली नहीं समायी। उन्होंने सारी जमीन पोते के नाम लिखा दी। पूरा परिवार सुख से रह रहा था। जब दूसरा पोता जन्मा तो जानकी बहन ने घर उसके नाम कर दिया और घर की चाबियां बहू को सौंप दी। वे कहने लगीं—

"अब घर-गृहस्थी, जायदाद तुम लोग संभालो। मैं तो शांति से भजन-पूजन करूंगी।"

लेकिन ऐसा नहीं हुआ। जैसे ही उन्होंने सब कुछ बेटे-बहू और पोतों को दे दिया उनके व्यवहार में बदलाव आने लगा। कभी वे किसी को देने

के लिए कुछ पैसा मांगती तो बहू तंगी का रोना रोने लगती। बेटा कहता आप तो बहुत खर्चा करती हैं।

धीरे-धीरे उनका खाना कपड़ा भी भारी पड़ने लगा। एक दिन तंग आकर जानकी ने कहा इससे तो मुझे वृद्धाश्रम भेज दो।

बेटे ने झटपट इसका इंतजाम कर दिया। हर महीने थोड़े से रुपए देकर उनसे पीछा छुड़ा लिया। जानकी बहन के लाड़ले पोते उनसे छूट गए। जिस घर में ब्याह कर आई थीं वह उनसे छूट गया। दिल पर पत्थर रख कर उन्होंने सबसे माया-मोह तोड़ लिया। और चारा भी क्या था।

सुमित्रा की सलाह

उनकी कहानी सुन कर सुमित्रा का दिल भर आया। वह बोली आपकी देख-भाल करना आपके बेटे का कानूनी फ़र्ज है। आपने चुपचाप अपना हक़ क्यों छोड़ दिया। पहली गलती तो आपने तब की जब लाड़-प्यार में आकर सारी संपत्ति उनके नाम कर दी। अब दूसरी गलती आप यह कर रही हैं कि अपने भरण-पोषण का हक़ भी नहीं मांग रहीं। कानून की धारा 125 के तहत कमाने वाले बेटे और बेटी दोनों की ज़िम्मेदारी है कि वे अपने बेसहारा मां-बाप को भरण-पोषण भत्ता दें।

जानकी बहन को हक़ मिला

वृद्धाश्रम में रहते हुए ही उन्होंने अदालत में अपने बेटे के खिलाफ़ शिकायत दायर की। सुमित्रा की संस्था ने उनकी पूरी मदद की। जज साहब ने बेटे की हैसियत देखते हुए हर महीने पांच सौ रुपया जानकी बहन को दिलवाया।

□

पत्नी को घर में रहने का अधिकार

आंध्र प्रदेश में एक सार्वजनिक उद्योग में काम कर रहे पति को पट्टे करार (लीज़) पर घर मिला हुआ था। पति पत्नी में मतभेद हो गया। पति दूसरे मकान में रहने चला गया। पत्नी ने न्यायालय में गुजारे-भत्ते की अपील दायर की। उसको आदेश पत्र मिल गया। पति ने बदले की भावना से पट्टे करार को समाप्त कर दिया।

जब कंपनी ने पत्नी को मकान से निकालना चाहा तो फिर उसने ज़िला न्यायाधीश की अदालत में आवेदन-पत्र दिया। ज़िला न्यायाधीश ने पत्नी को निकाले जाने के संबंध में कंपनी को मना किया और एक अस्थाई निषेध ज़ारी किया। उच्च न्यायालय ने इसे वैध माना और कहा कि पति अपनी पत्नी और नाबालिग बच्चों को मकान देने के लिए बाध्य है। कंपनी राज्य का एक तंत्र है और वह ऐसा कोई काम नहीं कर सकती जिससे कि कोई परिवार बेघर हो जाए।

सुनो बहना

तुम्हें नहीं है अब घूंघट साधे रहना
रक्त का सैलाब बढ़ता ही जा रहा
आखिर कब तक खेली जाती रहेगी
हमारे जिस्मों पे रक्तिम होली
नहीं बनना है अब बलि का बकरा
घूंघट उठा शक्ति का रूप दिखा
देख-देख सामने महिषासुर है खड़ा
करना है तुम्हें उसका वध, अब और नही सहना

शोभा कुमारी
समस्तीपुर

महिलाएं और कानूनी मदद

सुहास कुमार

अदालतों के गलियारे लंबे, भटकावदार और अड़चनों से भरे हैं। आम पुरुष भी जब कानून का दरवाजा खटखटाता है तो उसे कई दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। औरत के लिए तो दिक्कतें कई गुना बढ़ जाती हैं। यही कारण है कि महिलाएं अक्सर कानून की मदद नहीं ले पातीं।

थाने में दिक्कतें

सबसे पहली दिक्कत तब आती है जब वे थाने में प्रथम सूचना रपट लिखाने जाती हैं। अगर पति या ससुराल वालों द्वारा मारपीट की शिकायत दर्ज कराने जाती हैं तो अव्वल तो रपट लिखी ही नहीं जाती। कहा जाता है—"हर घर में यह थोड़ा बहुत तो होता है। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसकी रपट लिखाई जाए।" अनपढ़ महिलाओं से कहा जाता है—"आप जाओ हम कार्यवाही करेंगे।"

महिला संस्थाओं की विशेष मांग से धारा 498-ए बनी। लेकिन इससे कुछ खास मदद महिलाओं को नहीं मिली। इसके तहत् जब औरत थाने में रपट लिखाने जाती है तो उससे कहा जाता है—"अगर अपने पति के खिलाफ़ रपट लिखाओगी तो खाओगी क्या? आप रपट मत लिखवाओ।" अगर लिख भी ली जाती है तो उसे महीनों थाने के धक्के खाने पड़ते हैं। कभी-कभी तो सारा दिन थाने में बिठाए रखते हैं। कामकाजी महिला इतनी छुट्टियां ले नहीं सकती। हारकर उसे अपना केस वापस लेना पड़ता है।

इसके अलावा थाने में रपट लिखाने जाने वाली महिलाओं के साथ बदतमीजी, शील-भंग और बलात्कार तक के मामले सामने आए हैं।

कई बार पुलिस वालों की खुद की जानकारी अधूरी रहने की वजह से वह गलत सलाह देते हैं। दिल्ली पुलिस की विशेष दहेज विरोधी सेल की प्रमुख उपायुक्त कंवलजीत देओल के शब्दों में—"किसी भी नए क़ानून के बारे में पुलिस वालों को जानकारी मिलने में आराम से दो साल तक लग जाते हैं।"

धारा—498-ए

इस धारा के अनुसार पति या ससुराल वालों द्वारा सताए जाने पर औरत, उसका कोई रिश्तेदार या सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त समाजसेवी संगठन उनके खिलाफ़ रपट दर्ज करा सकता है। अपराधियों को तुरंत गिरफ्तार किया जाएगा। इस जुर्म की ज़्यादा से ज़्यादा सज़ा 3 साल है। अपराधी की जमानत थाने पर नहीं हो सकती। इसकी जमानत सिर्फ़ कोर्ट में ही हो सकती है।

- *पति या ससुराल वालों के ताने और मारपीट से उसे शारीरिक या मानसिक चोट पहुंचती है, या वह इन कारणों से आत्महत्या कर लेती है।*

• यदि पति के रिश्तेदार उसके साथ क्रूरता का व्यवहार करते हैं जैसे, दहेज को लेकर ताने मारना, सताना...

यह धारा 1983 दिसंबर से क़ानून की किताब में आ गई है। अभी इसका ज़्यादा प्रसार एवं प्रचार नहीं हुआ है। धीरे-धीरे लोगों की इसके बारे में जानकारी बढ़ रही है। दिल्ली में जनवरी से अप्रैल '92 तक 68 केस दर्ज हुए। यह संख्या काफ़ी गंभीर है। क्योंकि बमुश्किल तीन में से एक केस दर्ज किया जाता है।

सुश्री कंवलजीत का कहना है—"यह कानून परिवार से संबंधित है। इसलिए हम शुरू में कोई कार्यवाही नहीं करते हैं। अक्सर औरतें गुस्से में हमारे पास पति या ससुरालवालों के खिलाफ़ शिकायत लेकर आती हैं। जैसे ही हम किसी को गिरफ्तार करते हैं वही औरत उनकी जमानत के लिए भाग-दौड़ करने लगती है। इसलिए हम औरतों को वक्त देते हैं। आस-पड़ोस में पूछताछ करते हैं।"

"ज़्यादातर मामलों में पुलिस को घर आया देखकर ही ससुरालवाले सीधे हो जाते हैं और बहू के साथ समझौता कर लेते हैं।"

—सुधा तिवारी, शक्तिशालिनी

एक पुलिस सुपरिटेंडेंट ने बताया कि पुलिस ट्रेनिंग के दौरान फ़ौजदारी क़ानून की जानकारी पर ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है और दीवानी क़ानून पर कम। महिलाओं संबंधी सभी मामलों को घरेलू क़रार देकर उन पर खास ध्यान नहीं दिया जाता है।

कोई भी औरत दिल्ली के थानों में अपनी परेशानी लेकर जाती है उसे अमूमन जवाब मिलता है—"विमेन सैल (औरतों का विशेष थाना) में जाकर शिकायत लिखवाइए।" वह तो रपट दर्ज ही नहीं करना चाहते हैं। अगर रपट दर्ज कर भी ली जाए तो खोजबीन के लिए वह समय पर नहीं पहुंचते हैं।

शक्तिशालिनी संस्था के पास एक लड़की 'किस्मती' का मामला आया। उसके पति ने दूसरी शादी कर ली और उसे खूब मारता-पीटता। जब वह थाने में रपट के लिए गई तो रपट नहीं लिखी गई। बहुत सताई जाने पर वह 10-15 दिन शक्तिशालिनी के आश्रय घर में रहती, फिर पति के पास वापस चली जाती। उसका अंधविश्वास था कि पति के घर मरेगी तो स्वर्ग मिलेगा। जल्दी ही उसे स्वर्ग मिल गया। उसके पति ने ही उसको मार डाला। शक्तिशालिनी ने उसका दाह-संस्कार किया। क्या पुलिस का ग़लत रवैया भी उसकी मौत का जिम्मेदार नहीं?

दहेज के मामलों में पुलिस वाले सीधे दहेज अपराध शाखा का रास्ता दिखा देते हैं। दहेज अपराध शाखा में शिकायत दर्ज की जाती है, प्रथम सूचना रपट नहीं ली जाती। क्या थानों में उनके लिए कोई मदद नहीं रह गई है?

बलात्कार के मामले में रपट लिखाने जाने पर महिला को अजीब सवालों का सामना करना

पड़ता है। पुलिस पूछती है—"आप बलात्कारी से इतनी हाथापाई क्यों कर रही थीं जबकि आपको मालूम था कि आप अपना बचाव नहीं कर सकतीं?" दूसरी ओर अदालत में उससे पूछा जाता है—"अगर आपने अपने बचाव के लिए हल्ला या हाथापाई नहीं कि तो इसका मतलब है जो भी हुआ आपकी मर्ज़ी से हुआ।"

बलात्कार की शिकार महिला के खून से रंगे कपड़ों को थाने में ऐसे लहराया जाता है जैसे कि झंडा फहराया जा रहा हो। उससे पूछा जाता है—"कैसे बलात्कार हुआ?" बजाए उसके साथ सहानुभूति दिखाने के, उसकी बेबसी और लाचारी को मनोरंजन का साधन बनाया जाता है। बलात्कारी से ज़्यादा औरत के चरित्र की जांच-पड़ताल की जाती है। औरत से पूछा जाता है—"तुमने ऐसा क्या किया था जो तुम्हारे साथ बलात्कार हुआ। ज़रूर तुमने पुरुषों को रिझाने वाले कपड़े पहने होंगे।"

अदालत में दिक्कतें

अगर मामला थाने की दिक्कतें पार कर अदालत में पहुंचता है तो भी मुश्किलें हल नहीं हो जातीं। अदालत के चक्कर तो काटने ही पड़ते हैं। लोगों की प्रतिकूल नज़रों का सामना भी करना पड़ता है जिसमें अजूबा, अनादर, विरोध आदि भाव रहते हैं। औरत ने हिम्मत करके अन्याय के खिलाफ़ आवाज़ उठाई है यह कोई नहीं सोचता। उसमें सहनशीलता आदि गुणों की कमी मानकर असम्मान पूर्वक दृष्टि से देखा जाता है। उसके चरित्र को शक़ की निगाहों से देखा जाता है। उस पर उंगलियां उठाई जाती हैं और कीचड़ उछाली जाती है।

अक्सर बेकार के अपमानजनक सवाल पूछे जाते हैं। मेडिकल रिपोर्ट, चेहरे व हाथों पर चोटों के निशान, खून से रंगे कपड़ों आदि सबूतों के होते हुए भी अदालत का रुख सहानुभूतिपूर्ण नहीं होता।

दहेज के मामले जब कोर्ट में जाते हैं तो यह साबित करना मुश्किल हो जाता है कि लड़की ज़ेवर लेकर घर से निकली थी या ससुराल में छोड़ आई थी। दहेज का सामान भी पूरा नहीं मिलता। जो मिलता है वह काफ़ी पुरानी बेकार की चीज़े होती हैं। वह नहीं जो उसे मायके से मिला था।

न्यायाधीश का नज़रिया

अक्सर महसूस होता है कि पुरुष न्यायाधीश महिलाओं का नज़रिया समझने की कोशिश नहीं करते और इसकी छाप उनके फैसले पर दिखाई देती है। कई मामलों में महिलाओं के साथ ज़्यादती होती दिखती है। अपराधी छूट जाते हैं। पिछले एक साल में दिल्ली कोर्ट में 21 दहेज के मामलों में सिर्फ़ 4 मामलों में अपराधियों को सज़ा दी गई।

हिम्मत नहीं हारनी

इन दिक्कतों के बावजूद हमें निराश नहीं होना है। कई शहरों में थानों पर महिला पुलिस हैं और महिला पुलिस थाने भी खुले हैं। इन थानों पर आने वाली दिक्कतें कुछ कम होंगी। इसी तरह ज़्यादा महिला वकील, सरकारी महिला-वकील, महिला पुलिस अफ़सर और महिला न्यायाधीश बढ़ने से कुछ दिक्कतें तो आसान होंगी।

थाने पर औरत अकेले न जाए। साथ में पुरुष साथी या महिला संगठन अथवा सामाजिक संगठन के सदस्य होने से स्थिति काफ़ी बेहतर रहती है।

अब पुलिस ट्रेनिंग में भी बदलाव आ रहा है। महिला संगठनों की मांग पर उनको महिला कार्यकर्ताओं से बातचीत का मौका भी दिया जाता है। इससे उनके नज़रिये में बदलाव आने की काफी उम्मीद है।

कानून के हाथ बहुत से नियमों से बंधे हैं। वह सबूत मांगता है। किसी भी मामले में कानून का दरवाजा खटखटाने से पहले अपने सबूतों को इकट्ठा कर लें। गवाह भी पक्के साथ में रखें। गवाही बदल देने वाले लोग नहीं होने चाहिए। सबसे ज़्यादा मजबूत सबूत लिखित सबूत हैं।

कुछ कानूनों में सुधार अदालत के फैसले के आधार पर भी हुआ है। मुकदमे के दौरान कानून की कमियां सामने आईं। कानून हमारी मदद के लिए ज़रूर है, मगर हमें अपनी ओर से भी काफी कोशिश करनी पड़ती है। कहावत है भगवान भी उन्हीं की मदद करते हैं जो खुद अपनी मदद करते हैं।

क्या नौकरीपेशा पत्नी यह दावा कर सकती है कि वह जहां चाहे रहे?

पत्नी को इस प्रकार का अधिकार है। एक मामले में पति और पत्नी अलग-अलग जगहों पर नौकरी करते थे। पत्नी ने शादी के बाद भी नौकरी नहीं छोड़ी। पति ने हिंदू विवाह अधिनियम के तहत् यह याचिका दायर की कि पत्नी को आकर साथ में रहना चाहिए। पत्नी ने नौकरी के कारण इससे इंकार कर दिया। दिल्ली उच्च न्यायालय ने पति की याचिका रद्द कर दी और फैसला दिया कि हिंदू क़ानून में ऐसा कोई आदेश नहीं है कि हिंदू पत्नी को शादी के बाद घर चुनने की आज़ादी नहीं है।

गर्भपात संबंधी कानून

अप्रैल 1972 से लागू गर्भपात कानून (एम.टी.पी. एक्ट) के तहत् हर बालिग महिला गर्भ ठहरने के 12 हफ्तों में गर्भपात करा सकती है। लेकिन नीचे लिखे हालात में ही गर्भपात वैध माना जाएगा। यह हालात हैं—

1. गर्भवती महिला का जीवन खतरे में हो।
2. गर्भावस्था जारी रखने से गर्भवती का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य बिगड़ रहा हो।
3. गर्भ बलात्कार से ठहरा हो।
4. बच्चे के विकलांग पैदा होने का डर हो।
5. गर्भ किसी गर्भ-निरोधक के काम न करने से ठहरा हो।
6. यह डर हो कि गर्भावस्था के जारी रहने से आगे चलकर स्त्री का स्वास्थ्य खराब होगा।

गर्भपात करवाने के लिए पति की मंजूरी ज़रूरी नहीं। अगर लड़की 18 साल से कम है तो अभिभावकों की मंजूरी लेनी पड़ती है।

अधिनियम में यह भी प्रावधान है कि ज़रूरी हो तो 20 हफ्ते तक भी गर्भपात करवाया जा सकता है। हालांकि 12 हफ्ते से ज़्यादा की हालत में कम से कम दो डाक्टरों की सहमति ज़रूरी है।

कानून के दरवाजे पर दस्तक

डा. प्रेमलता

कुछ भी पाने के लिए मुश्किलों का सामना तो करना ही पड़ता है। कानून लागू करवाने के लिए, अदालतों के रास्ते पर चलने में समय और पैसा दोनों खर्च होते हैं। उसमें काफ़ी धैर्य की ज़रूरत होती है। जब अपने हक़ के लिए लड़ने की सोचें तो उस लड़ाई के लिए अपने को पूरी तरह तैयार करें। अपने अंदर आत्मबल और आत्मविश्वास पैदा करना होगा। इरादा पक्का हो तो जीत निश्चय ही आपकी होगी। छोटी-मोटी हार से निराश न हों। दिक्कतों का सामना सूझ-बूझ से करें।

आज समाज में औरतों के अधिकारों को लेकर काफ़ी जागरुकता आ गई है। इसमें महिला संस्थाओं और सामाजिक संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। कई संस्थाएं निःशुल्क क़ानूनी सहायता देती हैं और छोटे-बड़े मामले आपसी समझौते से भी निपटाती हैं।

एक बार अदालत में केस जाने के बाद कम से कम दो साल लगना मामूली बात है। पर इससे हमें निराश नहीं हो जाना चाहिए। बल्कि सारे सबूत जुटाकर अदालत का दरवाजा खटखटाना चाहिए। इससे न्याय भी मिलेगा और देरी से भी बचा जा सकता है। किसी भी अपराधी को सज़ा दिलवाने के लिए सबूतों का होना ज़रूरी है। अदालत के हाथ भी कुछ नियमों से बंधे हैं।

आर्थिक प्रबंध ज़रूरी

अदालत की ओर कदम बढ़ाते समय पहला काम अपने लिए काम ढूंढने का करना होगा। मेहनत से कमाई करने में शर्म नहीं महसूस करनी चाहिए। अपना धंधा चलाने के लिए बैंक से कर्ज़ मिल सकता है। सामाजिक और महिला संस्थाएं भी मदद करती हैं। निःशुल्क क़ानूनी सहायता भी मिल सकती है।

सही जानकारी

अक्सर औरतों को इस बात की जानकारी नहीं होती कि किस बात के जवाब में क्या कहना चाहिए। बहकाकर उनसे कुछ भी कहलवा लिया जाता है और दूसरा पक्ष बेईमानी से जीत जाता है। एक मामले में पत्नी को बहकाकर ऐसे दस्तावेज़ पर दस्तख़त करवा लिए जिसमें लिखा था कि उसकी आमदनी 500 रु. प्रति माह है और उसका पति कुछ नहीं कमाता। उसे बताया गया था कि पति उसे 500 रु. प्रतिमाह देने का वादा कर रहा है। इसलिए कभी भी बिना समझे और बिना पढ़े किसी भी कागज़ पर न तो हस्ताक्षर करें और न ही अंगूठा लगाएं।

एक केस में पति ने पत्नी के पढ़े-लिखे न होने का फायदा उठाकर "आपसी राय से तलाक" के आवेदन-पत्र पर हस्ताक्षर करवा लिए और चुपचाप तलाक़ ले लिया। इस तरह का आवेदन अदालत में देने से 6 महीने में तलाक मिल जाता है और कोई सबूत नहीं चाहिए होता है। इस तरह के धोखों से सावधान रहें।

बच्चे की 'कस्टडी' का सवाल

पति-पत्नी के अलग होने पर बच्चों का सवाल उठता है। अगर पत्नी बच्चे का अधिकार चाहती है तो उसे साबित करना होगा कि बच्चा उसके पास खुश रहेगा। यह ज़रूरी नहीं है कि बच्चे की भलाई पैसा अधिक होने से हो जाती है। बच्चे को सबसे ज़्यादा ज़रूरत प्यार, उसके लिए समय और ध्यान देने की है। यदि आप यह दे सकती हैं तो अदालत पति को आदेश देगी कि पैसे की कमी को वह पूरा करे। ज़रूरत यह है कि आप बयान सोच समझकर दें।

बच्चे का आपके पक्ष में होना बहुत ज़रूरी है क्योंकि अदालत में बच्चे की इच्छा पूछी जाएगी। उसकी इच्छा के विरुद्ध फैसला नहीं किया जा सकता। कानूनन 5 साल से छोटा बच्चा मां के पास रहेगा। उसके बाद वह पिता के पास रह सकता है। अतः साधारणतया कस्टडी का सवाल बच्चे की 5 साल की उम्र के बाद ही उठता है।

घर न छोड़ें

कुछ मामलों में पति का इरादा न तो पत्नी को छोड़ने का होता है, न उसे शांति से रहने देने का। कभी वह पत्नी से मायके से पैसा आदि लाने को कहेगा। कभी घर से निकाल देने की धमकी देगा। ऐसी सूरत में पत्नी "विमेन सैल" में शिकायत कर सकती है। वहां पहले दोनों पक्षों को बुलाकर समझौता कराने की कोशिश की जाती है। लेकिन अगर मामला न सुलझा तो अदालती कार्यवाही की सिफ़ारिश की जाती है।

हर हालत में घबरा कर घर छोड़ देना समस्या का समाधान नहीं है। ज़मीन जायदाद के मामले में जब हक़ की बात उठती है तब कब्ज़ा होना सबसे महत्वपूर्ण बात मानी जाती है। जहां तक हो घर का कब्ज़ा नहीं छोड़ना चाहिए।

लेकिन अगर बात इतनी बढ़ जाए कि यातना बर्दाश्त से बाहर हो जाए और जान का खतरा महसूस हो तो ऐसा घर छोड़ देना ही बेहतर है। लेकिन हो सके तो सबूत ज़रूर इकट्ठे कर लेने चाहिए ताकि आप अपने अधिकारों के लिए लड़ सकें तथा अपराधी को सज़ा दिलवा सकें।

□

नारी नारी की दुश्मन—सच या झूठ

श्रीलता बाटलीवाल

'नारी ही नारी की दुश्मन है' ऐसा सिर्फ़ आम लोग ही नहीं सोचते-कहते बल्कि बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों, संस्थाओं के प्रतिनिधि भी कहते हैं। दुख की बात यह है कि इस एक वाक्य के कहते ही औरतों की समस्याओं पर होने वाला सोच-विचार और चर्चा बंद हो जाती है। सबको इस गंभीर समस्या से छुटकारा पाने का आसान रास्ता मिल जाता है। जब औरत ही औरत के दुखों के लिए जिम्मेदार है तो और लोग क्या कर सकते हैं। इसलिए इस वाक्य की जड़ तक पहुंचना ज़रूरी है ताकि लोगों के मन से इस भ्रम को दूर किया जा सके।

आधा सच-आधा झूठ

नारी नारी की दुश्मन है यह सच भी है और झूठ भी। स्त्री समानता के लिए काम करने वाले लोगों के लिए यह बात समझना बहुत ज़रूरी है ताकि यह वाक्य उनके रास्ते की रुकावट न बन सके।

पहले तो हमें यह समझना चाहिए कि समाज में प्रचलित बहुत-सी धारणाएं जो पहले सच समझी जाती थीं बाद में झूठ साबित हुई। इसलिए कोई बात सिर्फ़ इस कारण सच नहीं मान ली जानी चाहिए क्योंकि लोग ऐसा कहते या मानते आए हैं। हमें उसे आज की कसौटी पर कसना चाहिए। उसके कारणों और प्रभावों की जांच पड़ताल करनी चाहिए।

दो उदाहरण—किसी ज़माने में माना जाता था कि सूर्य और चंद्रमा हमारी धरती के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। बाद में वैज्ञानिक जांच पड़ताल ने इसे झूठ साबित कर दिया।

करीब सौ साल पहले गोरे लोगों का कहना था कि अफ्रीका व एशिया के काले लोगों का सिर छोटा होने की वजह से उनकी अक्ल भी कम होती है। आज संसार के काले लोग हर क्षेत्र में बढ़ चढ़ कर काम कर रहे हैं। ये दोनों ही धारणाएं गलत थीं।

औरत का सवाल

अब हम अपने मुद्दे पर लौटते हैं। दुनिया के हर समाज का ढांचा अन्याय और शोषण पर आधारित है। खासतौर पर जो अपने आपको जितना ज़्यादा सभ्य मानते हैं वहां शोषण उतना ही अधिक है। आदिवासियों के समाज में आज भी यह कम है।

हमारे देश का हिंदू समाज जाति, वर्ग वगैरह के भेदभाव पर बना। पहले ये भेद इतने कठोर नहीं थे लेकिन धीरे-धीरे ऊंची जातियों ने शूद्रों और दलितों को पशुवत जीवन जीने पर मजबूर कर दिया। खुद शूद्र भी अपना नीचा दर्जा स्वीकार करने लगे। उसे अपने भाग्य और कर्मों का फल कहने लगे। अपने बच्चों को वही सिखाने लगे। इसका मतलब यह नहीं कि वे अपने ही दुश्मन थे या सब उनकी इच्छा से हुआ।

समाजीकरण बहुत बड़ी ताक़त है। वह मनुष्य की पूरी सोच को बनाती है।

औरतें भी उन्हीं विश्वासों, मूल्यों और आदर्शों को स्वीकार कर लेती हैं जो उन्हें जन्म से सिखाए जाते हैं।

सत्ता की लड़ाई

इस समाज में औरत को घर की चार दिवारी के भीतर छोटी-सी जगह मिली है जबकि पुरुष का कार्यक्षेत्र पूरी दुनिया है। घर के भीतर भी बड़े फ़ैसले मर्द के हाथ में है। औरतों के पास भी उतनी ही बुद्धि, क्षमता, काम करने की इच्छा है जितनी पुरुष के पास। वह भी काम से संतोष, प्रशंसा और ताक़त पाना चाहती है। अब छोटे से दायरे में अगर एक और औरत आ जाएगी, ताक़त का बंटवारा होगा तो झगड़ा स्वाभाविक है। जहां भी औरतें घर के बाहर काम करती हैं, उनकी स्वाभाविक इच्छाओं की पूर्ति के लिए बड़ा क्षेत्र मिलता है ये झगड़े कम होते हैं। तब पत्नी और मां अपने बलबूते पर भी सम्मान पाती है, उसे पुरुष के रिश्ते की बैसाखी नहीं चाहिए।

जहां भी औरतों के झगड़ों और इर्ष्या की बात उठती है हमें पूछना चाहिए क्या पुरुष पुरुष का दुश्मन नहीं? देशों के बीच आपसी युद्ध पुरुषों की ही देन हैं। वर्ग, नस्ल, रंग, संप्रदाय को लेकर फैल रही नफ़रत और मारकाट पुरुषों का ही काम है। दो महायुद्ध और हिरोशिमा नागासाकी का भीषण नरसंहार करने वाले भी पुरुष ही थे। इतिहास के पन्ने इसकी गवाही देते हैं।

सारांश

मैं यह भी नहीं मानती कि पुरुष औरत का दुश्मन है। औरत की दुश्मन तो वह व्यवस्था है जो उसे आज़ादी से जीने नहीं देती।

स्त्री हो या पुरुष, हम सभी एक अन्यायी ढांचे में फंसे हुए हैं। एक दूसरे को दोष देने से हल नहीं निकलेगा। हम सबको मिल कर इस ढांचे को बदलने की तरकीब खोजनी होगी। □

मेरा पथ

खुद को जानना पहचानना,
परखना औरों को,
सहयोग ले बढ़ना आगे।
शीश झुकेगा सम्मान में
पर न झुकेगा अत्याचारों के सामने
नहीं मतभेद पुरुष से,
सहयोगी रही हूं सदा उसकी,
चाह है उससे सहयोग की।
मार्ग में बाधक बनने वालो
मुझसे टकराना नहीं—
हो सके तो साथ चलना आगे तक
अन्यथा,
बाधाओं को चीर, मैं अपने पथ पर बढ़ती रहूंगी
क्योंकि,
अब मेरी मंजिल करीब है।

चित्रा जोशी

पुरुष पाठकों से संवाद

कमला भसीन

सबला में शुरू किये गये नये स्तंभ 'पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र' का हमारे भाईयों ने खूब स्वागत किया है। हमें बहुत से पाठकों ने पत्र लिखे हैं और अपने विचार भेजे हैं। इन पत्रों ने हमारा हौसला बढ़ाया है और एक बहस की भी शुरुआत की है। इस स्तंभ के जवाब में आये सब पत्रों को छापना तो मुश्किल है इसलिये हम केवल कुछ पत्र ही छाप पायेंगे। हम खास तौर से उन पत्रों को छाप रहे हैं जिनमें कुछ मुद्दे उठाये गये हैं, जिन पर बातचीत ज़रूरी है।

लेकिन हम केवल पत्रों से संतुष्ट होने वाले नहीं हैं। हमें उम्मीद है कि हमारे पुरुष पाठक लेख और कवितायें भी भेजेंगे। औरतों के बारे में लेख मिल जाते हैं। औरतों को दिये जाने वाले सुझाव, नसीहत भी आसानी से मिल जाती है। हमें आज ज़रूरत महसूस होती है ऐसी कार्यवाहियों की जहां पुरुष पुरुषों के साथ बातचीत करें, उनके विचारों, व्यवहारों को बदलने की कोशिश करें।

सामाजिक समस्या

जैसा हमने पहले भी कहा था समस्या महिलाओं की नहीं है, समस्या सामाजिक है, स्त्री-पुरुष संबंधों की है। दहेज क्या औरतों की समस्या है? बलात्कार क्या स्त्रियों का ही मुद्दा है? क्या बलात्कार पुरुषों का मुद्दा नहीं है? क्या समाज का इस हिंसा से कोई सरोकार नहीं है? क्या बलात्कार की खबर सुनकर पुरुषों को गुस्सा नहीं आता या नहीं आना चाहिये? फिर क्या कारण है कि दहेज के खिलाफ सिर्फ़ महिलायें और महिला समूह ही आवाज उठाते हैं? बलात्कार पर मोर्चे सिर्फ़ औरतों को ही क्यों निकालने पड़ते हैं? क्यों इन मुद्दों पर सब पुरुष एक हो जाते हैं? अगर ऐसा नहीं है तो फिर खामोशी क्यों? राजनैतिक पार्टियां, ट्रेड यूनियनें कितनी बार वो मुद्दे उठाती हैं जिनसे औरतें परेशान हैं? क्या हम समाज का आधा हिस्सा नहीं हैं?

बहुत से संवेदनशील पुरुष स्त्रियों के साथ, स्त्रियों के लिये काम करते रहे हैं। उनकी हम सराहना करते हैं और स्वागत करते हैं। लेकिन हम ये भी चाहते हैं कि पुरुष पुरुषों के साथ भी काम करें। जहां मौक़ा पड़े वहां स्त्री-पुरुष समस्याओं पर बातचीत करें। हमारी नज़र में बहुत कम ऐसी समस्याएं हैं जो सिर्फ औरतों की हों, और ऐसी कोई समस्या नहीं है जिसका औरतों से सरोकार न हो।

हमारे स्तर पर हमने पुरुषों से बातचीत शुरू की है। उनके साथ स्त्री-पुरुष समस्याओं पर गोष्ठियां करनी शुरू की हैं। हमें लगता है इन सब समस्याओं पर गहराई से और ठंडे दिमाग से सोचना ज़रूरी है। हमें बहुत खुशी है कि 'सबला' में यह संवाद शुरू हुआ है।

पुरुष पाठकों के दो पत्र

मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) से सनातन धर्म कालेज के प्रिंसीपल डाक्टर एल.एन. मित्तल ने लिखा है:—

"महिला समानता या नारी आंदोलन सामाजिक

बदलाव की प्रक्रिया के अंश हैं। संपूर्ण भारत पितृ-सत्तात्मक नहीं है। जहां मातृ-सत्तात्मक समाज है वहां भी नारी समस्या है।

"महिला पत्रिका के माध्यम से जो बात मैं कहना चाहता हूं वह मुख्यतः महिलाओं से ही है। महिलाएं—पढ़ी-लिखी और अनपढ़, दोनों—अपने होना चाहिए।

"दूसरे, महिलाओं को स्वयं अपने दायरे से बाहर आना है। शहरी या ग्रामीण, दोनों महिलाएं—पढ़ी-लिखी और अनपढ़ दोनों—अपने पतियों को रसोई का काम नहीं करने देंगी। ...घर-गृहस्थी के काम में बदलाव लाना होगा। अपना समय गेहूं साफ करने, मसाला पीसने और खाने के चटपटे सामान बनाने में कम लगाकर अन्य आय-जनित कार्यों में लगाएं। ...मर्द तो औरतों के घर के काम के बोझ को कम करने को तैयार हैं, औरतें उन्हें रसोई में घुसने कहां देती हैं।

"कामकाज के स्थान पर स्त्रियों से छेड़छाड़ भी कुछ कम हो जाए यदि महिलाएं रियायत न मांगें और कुछ कम बने-संवरें। कार्यस्थल पर सादे कपड़ों में आएं। पता नहीं क्यों टी.वी. पर जो स्त्रियां विभिन्न कार्यक्रमों में आती हैं इतना बनाव-श्रृंगार करती हैं?"

टिप्पणी

मित्तल साहब की बहुत सी बातों से हम सहमत हैं। महिलाओं के बारे में जो बातें उन्होंने लिखी हैं वो अक्सर कही जाती हैं। बातें सही भी हैं। हमें सोचना ये है कि औरतें ऐसा व्यवहार क्यों करती हैं। क्या कारण है इसके पीछे।

वैसे, अगर मित्तल साहब ने पुरुषों के व्यवहार के बारे में भी कुछ लिखा होता तो ज़्यादा अच्छा लगता। औरतों को उनकी समस्याओं का ज़िम्मेदार ठहरा कर पुरुष अपनी ज़िम्मेदारी से बच नहीं सकते।

मित्तल साहब ने लिखा है कि "कामकाज के स्थान पर स्त्रियों से छेड़छाड़ भी कम हो जाये यदि महिलाएं रियायत न मांगें और कुछ कम बनें संवरें"। यानि छेड़खानी की ज़िम्मेदार भी पूरी तरह से औरतें खुद हैं। छेड़ने वालों को मित्तल साहब ने बिलकुल बरी कर दिया। इस तरह की सोच ग़लत ही नहीं ख़तरनाक भी है। अगर हम सब औरों को सबक सिखाने का (और वो भी छेड़खानी करके या किसी और प्रकार की हिंसा करके) अधिकार अपने हाथ में ले लें तो समाज नहीं चल सकता।

कोटा (राजस्थान) से श्री एम.एल. भटनागर ने लिखा है:—

अप्रैल-मई '92 के 'सबला' अंक से नये स्तंभ 'पुरुष पाठकों के नाम एक पत्र' एक अच्छी शुरुआत है।

वस्तुतः प्रगतिशील/संजीदा/अनुभवी पुरुष नारी उत्थान में विशेष योगदान कर सकते हैं।

पति नामधारी व्यभिचारी व्यक्ति को मैं तो 'पति' नहीं मानता। पुस्तक का नाम स्मरण नहीं आ रहा— उसमे व्यभिचारी की पाशविक वृत्ति का जीता-जागता चित्र रोंगटे खड़े करने वाला है—

"गिद्ध और मुर्दा गोश्त। पुरुष और जिन्दा गोश्त। दोनों खेल एक से ही हैं। फर्क है तो सिर्फ इतना ही कि गिद्ध मुर्दा गोश्त को नोच-नोच कर उदर में डालता है और पुरुष जिन्दा गोश्त को नोचता-खरोंचता है, चचोड़ता है और अगर पुरुष का वश चले तो वह जिन्दा गोश्त को भी नोच-नोच कर खा जाये, पर वश नहीं चलता!"

भरणपोषण
साक्षरता
आत्मसम्मान
आर्थिक स्वतंत्रता
आत्म
निर्भरता

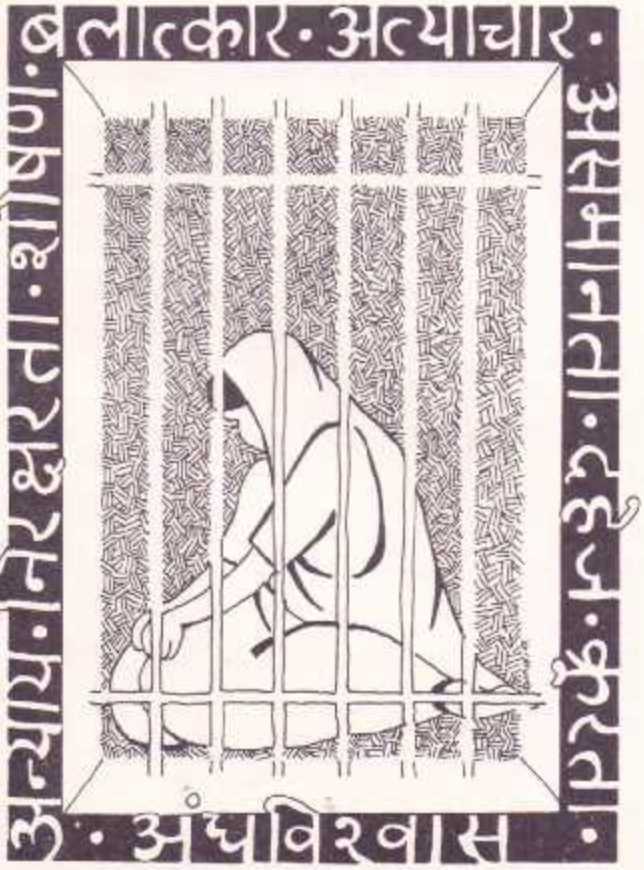

बलात्कार · अत्याचार ·
असमानता · दहेज · क्रूरता ·
अंधविश्वास
अन्याय · निरक्षरता · शोषण ·

अत्याचार को सहना, अत्याचार को बढ़ावा देना है

आगे बढ़ें, कानून आपकी सहायता के लिए तैयार है